दो शब्द

हिन्दी साहित्य सम्मेलन द्वारा स्वीकृत राष्ट्रभाषाकी व्याख्या बहुत व्यापक है। अुत्तर भारतके शहरों और गाँवोंकी आम जनता जिसे बोलती व समझती है, और जो नागरी या फ़ारसी लिपिमें लिखी जाती है, वही हमारी राष्ट्रभाषा है। शिक्षित, शिष्ट और संस्कारी लोगोंमें जो भाषा व्यापक रूपमें प्रचलित है, वह भी राष्ट्र-भाषाका ही अेक रूप है। जब कि राष्ट्रभाषाका प्रचार पश्चिम, दक्षिण और पूर्व हिन्दुस्तानमें दिन-प्रति-दिन बढ़ रहा है, तब अुसे देशके अुन हिस्सोंकी जनताकी सहूलियतका ख्याल ज़रूर रखना होगा। राष्ट्रभाषा अेक होते हुअे भी अुसके साहित्यमें भिन्न भिन्न प्रकारकी शैलियोंके लिये अवकाश तो रहेगा ही। जो लोग अपने देशको समझना चाहते हैं और विविधतासे भरी देशकी संस्कृतिसे लाभ अुठाना चाहते हैं, अुन्हें ख़सूसन् अिन सभी शैलियोंसे परिचित रहना होगा। हमारी यह कोशिश होनी चाहिये कि राष्ट्रभाषामें किसी भी स्वाभाविक संस्कार और शैलीका बहिष्कार न किया जाय। सब संस्कारोंको पचाकर वह सीधी, आसान और लोक-सुलभ बनी रहे।

राष्ट्रभाषापर जिस तरह संस्कृत, प्राकृत और अरबी-फ़ारसीका असर हुआ है, अुसी तरह सब प्रांतीय भाषाओंके साहित्यका भी कुछ-न-कुछ असर अुसपर ज़रूर पड़ेगा और तब धीरे धीरे हमारी राष्ट्रभाषा परिपुष्ट, समर्थ और पूरी तरहसे राष्ट्रीय बन जायगी।

—काका कालेलकर

प्रकाशककी ओरसे

राष्ट्रभाषा प्रचार परीक्षा–समितिके मंतव्यानुसार यह पुस्तक 'राष्ट्रभाषा-कोविद परीक्षा' के पाठयक्रमके लिये तैयार की गयी है। अिसके संग्रहकर्ता हैं श्री. हरिहर शर्मा और श्री. मुरलीधर सबनीस।

अिस कार्यमें श्री हृषीकेश शर्मा और श्री रामेश्वर दयाल दुबेसे भी काफ़ी सहायता मिली है।

अिस पुस्तककी छपाअीमें हमने नीचे क्रमके अनुसार परिवर्तन किया है:—

(१) हिन्दी साहित्य सम्मेलन द्वारा स्वीकृत स्वरोंके नये रूपोंका अुपयोग:—

पुराना रूप	नया रूप	पुराना रूप	नया रूप
इ	अि	ऋ	अृ
ई	अी	ए	अे
उ	अु	ऐ	अै
ऊ	अू		

(२) पाअीवाले अक्षर–ख, ग, घ, च, ज, झ, ञ, त, थ, ध, न, प, ब, भ, म, य, ल, व, श, ष, स, ज्ञ–जब संयुक्ताक्षरके पहले होते हैं तब अिनकी पाअी निकाल दी जाती है और ये अगले अक्षरके साथ जोड़े जाते हैं। जैसे—

गन्ना	गन्ना	विघ्न	विघ्न
कल्लू	कल्लू	विश्व	विश्व
कच्चा	कच्चा	पत्तल	पत्तल

(३) बिना पाअीवाले—क, द, ङ, ट, ड आदि—जब ये अक्षर संयुक्ताक्षरके पहले आते हैं तब ये हलन्त करके अगले अक्षरमें जोड़े जाते हैं या अिस ढंगसे मिलाये जाते हैं कि अगला अक्षर अिनके बगलमें रहे। जैसे—

क्क	क्क या क्‌क	द्व	द्‌व	गङ्गा	गङ्‌गा या गंगा
क्ल	क्ल या क्‌ल	द्ध	द्‌ध	हट्टा	हट्‌टा
द्य	द्य या द्‌य	द्ग	द्‌ग	खड्ड	खड्‌ड

(४) झ, ण—अैसे ही रहेंगे, न कि भ, ग।

(५) त्र—क्ष रहेगा।

(६) विभक्तिके प्रत्यय शब्दके साथ सटाकर लिखे जायँगे।

(७) जिन क्रियाओं या संज्ञाओंके अेकवचनमें 'या' व्यंजन होगा अुनके बहुवचनमें 'ये' व्यंजनका ही प्रयोग किया जायगा अुसी तरह स्त्रीलिंगमें 'यी' 'यीं' का प्रयोग होगा। जैसे, गये—गयी—गयीं, न कि गअे—गअी—गअीं। नया—नये—नयी, न कि नआ—नअे—नअी। लेकिन जहाँ अेकवचनमें स्वर होगा अुसके बहुवचन व स्त्रीलिंगमें भी स्वर ही का अुपयोग होगा। जैसे, हुआ—हुअे—हुअी, न कि हुये—हुयी।

समितिकी प्रकाशित सभी पुस्तकोंमें आगे भी यही क्रम रहेगा।

आशा है, हिन्दी-प्रेमी जनता अिस क्रमको पसंद करेगी और अिस नयी पुस्तकको भी और पुस्तकोंकी तरह अपनायेगी।

जिन सहृदय लेखकोंकी कहानियाँ अिसमें ली गयी हैं अुन सबके हम कृतज्ञ हैं।

वर्धा
१५—३—१९४०

मंत्री,
राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा.

सूची

कहानियोंका विकास

कोअी भी समाज जब स्थायी रूपको प्राप्त करने लगता है तब सामाजिक परिस्थितिको निर्देशित करनेके लिये और समाजकी साहित्यिक कृति-शक्तिका परिचय देनेके लिये कहानियोंका निर्माण होता है। लड़कोंको सिखानेकी दृष्टिसे तथा मनोरंजनके साथ साथ अपने अनुभवकी शिक्षा देनेके लिये समाजके बुजुर्गोंने कहानियाँ गढ़ी हैं। कअी अेक कहानियाँ वास्तविक घटनाको लेकर ही अुठती हैं। सामान्यतः अैसा कहा जा सकता है कि कहानियोंका मूल अुद्देश्य, प्रारंभिक ज्ञान-विकासको सहायता देते हुअे समाजके आदर्श तथा वास्तविक जीवनसे परिचय करा देना है।

प्राचीन कालमें कहानियोंका मूल उद्देश्य अुपदेश देना था। परंतु धीरे धीरे अुसमे लोकसंग्रह, मनोरंजन, धार्मिक शिक्षा, हँसी और अैतिहासिक घटनाओंके संकलनका भी समावेश होने लगा। सबमे प्राचीन ग्रंथ वेदोंमें भी संवादके रूपमें कअी कहानियोंका संग्रह किया गया है। कहानी-साहित्यकी दृष्टिमे ये आख्यायिकाअे अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। बौद्ध तथा जैन धर्मग्रंथोंमें भी दृष्टातके तौरपर अनेक आख्यायिकाओंका समावेश किया गया है। बौद्धोंकी 'जातक' कथाअें कहानी-साहित्यमें अपना अेक महत्वपूर्ण स्थान रखती हैं। जैनोंके नंदीसूत्र भी कम महत्वके नहीं हैं।

दार्शनिकोंने गहन विषयोंको समझानेके लिये और अपने सिद्धांतोंको प्रमाणित करनेके लिये अिन आख्यायिकाओंका प्रयोग

किया है। आगे चलकर अपना विषय समझानेके लिये विषयके अनुरूप कहानियोंका प्रयोग करना तो अेक प्रथा-सी हो गया। अिसी वजहसे कहानीके सूत्र तथा तंत्रमें खूब अुन्नति हुअी और पशु-पक्षी, मनुष्यके अंग, भूत-प्रेत, जड़-चेतन, सबको कहानीका आलम्बन व अुपकरण बननेका सौभाग्य मिला। स्वाभाविकता व अस्वाभाविकताका कुछ भी ख्याल न रखकर ये कहानियाँ गढ़ी गयीं। हँसाना, रुलाना, मनोरंजन करना और व्यावहारिक जीवनमें आदमीको कुशल बनाना, यही अिनकी अुपयोगिता थी।

वेद तथा अुनके अुपांगोंमें व अन्य दार्शनिक ग्रंथोंमें जो कहानियाँ पायी जाती है वे कहानीके विकासकी प्राथमिक अवस्था दिखाती हैं! हमारे सामने कहानीके संग्रहके रूपमें बौद्धोंका जातक-ग्रंथ आता हैं। जातक कहानियोंके संबंधमें अनेक मत प्रचलित हैं। अैसा कहा जा सकता है कि प्राचीन आर्यकथाओंका जातकके रूपमें अेक सुंदर परिष्कृत संस्करण निकाला गया। जातक कथाओंका असर मध्य अेशियाकी सभी कहानियोंके अूपर पड़ा हुआ पाया जाता है। जातकके साथ साथ धर्मकी विभिन्न धाराओंका समर्थन करनेके लिये जो ग्रंथ पाली और प्राकृतमें लिखे गये अुनमें भी संस्कृत कहानियोंका अच्छी तरहसे विकास हुआ। महाभारतकी छोटी-मोटी आख्यायिकाअें और पुराण ग्रंथोंकी कहानियाँ, ये तो अेक दृष्टिसे कहानी संग्रह ही हैं। पंचतंत्र, हितोपदेश अित्यादि संस्कृतके प्रसिद्ध कथा-ग्रंथोंका अपभ्रंश भाषाओंमें प्रयोग किया गया। तथापि अिसके अलावा भी, हर अेकमें अपना अपना अलग कहानी-संग्रह था। अीसाकी पहली शताब्दीमें पैशाची भाषामें बृहत्कथाकी रचना हुअी, जिसका बादमें संस्कृतमें अनुवाद किया गया।

पंचतंत्र वगैरह कथाओंका अरबी और फ़ारसीमें अनुवाद हुआ

है। परन्तु बृहत्कथाका अनुकरण करके ‘सहस्र रजनी’ (अरेबियन नाअिट्स) की कथाओंका संकलन किया गया। अिन सभी संग्रहोंमें यह विशेषता पायी जाती है कि किसी अेक व्यक्तिको प्रधान केन्द्र बनाकर, समाजमें प्रचलित अनेक विचारों, तथा कल्पनाओं तथा प्रथाओंको सजाकर सुचारु रूपमें लोगोंके सामने पेश किया गया है।

संस्कृत साहित्यमें अिस तरहका अंतिम संकलन दशकुमार-चरित्र है। अिसमें भारतीय कहानी-साहित्यके अपूर्व विस्तारका परिचय हमें मिलता है। परन्तु साथ-ही-साथ कहानीके मूल अुद्देश्योंमें सामाजिक परिस्थितिके अनुसार जो परिवर्तन होने लगे अुनकी भी तनिक झाँकी मिलती है। पहले साहस धर्मके लिये होता था। बादमें स्वार्थ और लौकिक अुन्नतिके लिये अुसका चित्रण किया गया। कूट-चातुरी, छल-प्रवंचना, आदि अुपायोसे लौकिक विजय प्राप्त करना अिनका अेकमेव हेतु दिखायी देता है। यात्रा और शिक्षा आदिका भी अिनमें समावेश किया गया है। सारांश, दशकुमार-चरित्र वर्तमान कालकी यूरोपियन साहसिक कहानियोंके ढंगपर लिखा गया है।

अिन कहानियोंमें कहीं कहीं लोक-चरित्रकी तीव्र आलोचना तथा नीति और व्यंगकी प्रधानता भी पायी जाती है। अपभ्रंश भाषाओंका कहानी-साहित्य अभी तक अप्राप्य है। अगर अुनका पता लग जाय तो वर्तमान कहानी-साहित्यकी ओर अग्रसर होते हुये कहानी-तंत्रका विकास कैसे हुआ, अिसका पता लग जाता।

हिंदीमें पहले पहल संस्कृतके बेतालपच्चीसी, सिंहासनबत्तीसी, शुकबहत्तरी आदि ग्रंथोंका अनुवाद किया गया। किन्तु हिंदीमें कहानीका सच्चा विकास खड़ी बोलीके साहित्यके विकासके साथ साथ यानी अुन्नीसवीं शताब्दीमें ‘रानी केतकी’ की कहानी (१८०३) से हुआ है। ये कहानियाँ तो अेक खिलवाड़-सी मालूम पड़ती हैं। परंतु

असीको लेकर सवा सौ वर्षोंमें हिंदी कहानी-साहित्यमें अितना विकास कैसे हुआ, यह हम भली भाँति जान सकते हैं।

अुन्नीसवीं शताब्दीके मध्य तक कहानियोंके अितिहासके संबंधमें कोअी विशेष अुल्लेखनीय बात नहीं हुअी। पौराणिक और धार्मिक संस्कृत कथाओंका हिंदीमें अनुवाद होता रहा। अिसके बाद 'राजा भोजका सपना' नयी भाषा व नया साँचा लेकर हिंदी संसारके सामने आया।

भारतेंदुके समयमें बँगला और अंग्रेज़ी साहित्यसे हिंदीमें अनुवाद होने लगे 'लॅम्ब्ज़ टेल्स' का अनुवाद अिसी समय प्रकाशित हुआ। सन् १९०० में 'सरस्वती' का प्रकाशन आरम्भ हुआ। वर्तमान हिंदी साहित्यकी ओर देखते हुअे मानना पड़ेगा कि कहानी-युगके अिस नये ज़मानेका विकास 'सरस्वती' द्वारा किया गया है। शुरूमें अंग्रेज़ी कहानियोंका छायानुवाद अिसमें प्रकाशित किया जाता था, जिससे कहानियोंके प्रति पाठकोंकी रुचि बढ़ी। फिर भी मौलिक लेखकोंका अिस वक्त अभाव था। वर्तमान युगकी मौलिक कहानियों की बुनियाद श्री. जयशंकर प्रसादजीने डाली। प्रसादजी अुत्कृष्ट कवि और गद्यलेखक भी थे। अतअेव आपकी कहानियोंमें भावुकता ओतप्रोत है। 'बिसाती' और 'आकाशदीप' आपकी कला का अेक अुत्कृष्ट नमूना है। प्रसादजीकी स्फूर्तिको लेकर ही श्री. विश्वंभरनाथजी जिज्जा, श्री. विश्वंभर नाथ 'कौशिक', बख्शी आदिने कहानियाँ लिखी हैं। श्री. राजा राधिकारमण सिंहकी 'कानोंमें कंगना' कहानी अपने ढंगकी पहली है, जिसने कहानी-संसारमें अेक नयी धारा शुरू की। १९१५ तक सामान्यतः सभी कहानियाँ घटना-प्रधान थीं। १९१६ में स्वर्गीय प्रेमचंदकी पहली कहानी 'सरस्वती' में निकली। अिसके बाद कहानियोंका अुद्देश्य केवल घटनाको लेकर

ही आगे बढ़ना न रहकर अब मानवी मनके सभी व्यापारोंको सुलझानेकी ओर अग्रसर हुआ है। अब वास्तववादी कहानियोंको भी स्थान मिल रहा है।

कहानी-कलाके संबंधमें यहाँ थोड़ा-सा अुल्लेख करना अनुचित न होगा।

कहानीका सबसे अधिक साम्य अुपन्यासके साथ है; किंतु अिनमें अंतर भी कम नहीं है। कहानी और अुपन्यासमें केवल आकारका ही नहीं, प्रकारका भी अंतर है। कहानी छोटी और अुपन्यास बड़ा होता है। अिसलिये यह न समझ लेना चाहिये कि छोटे अुपन्यासको कहानी और बड़ी कहानीको अुपन्यास कह सकते हैं। वास्तवमें मुख्य अंतर यह है कि कहानीमें अेक ही प्रधान तथ्य रहता है। अुपन्यासमें अेकसे अधिक। कहानी जीवनकी अेक घटना, अेक मर्मस्थलको अंकित करती है, समूचे जीवनको चित्रित करना अुसका काम नहीं। विस्तार सीमित होनेके कारण अुसमें अेक भी अनावश्यक वाक्य या शब्द न होना चाहिये। सीमित शब्दोंमें अेक तथ्यको चित्रित कर देना यानी कहानी लिखना अुपन्यास लिखनेकी अपेक्षा कहीं अधिक कठिन है।

कहानीका शीर्षक अुपयुक्त और अुसके अुद्देश्यका सूचक होना चाहिये; पर वह स्पष्ट न होकर प्रच्छन्न रूपमें होना चाहिये। कहानीमें पाठककी अुत्सुकता और आकर्षणको अंत तक बनाये रखना अत्यंत आवश्यक है। अिसलिये कथा-वस्तु, वर्णन, कथोपकथन, सभी कुछ आकर्षक होना चाहिये। प्रत्येक वाक्य किसी पात्रका संक्षिप्त चरित्र-चित्रण करता हुआ अुस प्रधान तथ्यकी ओर संकेत करनेवाला होना चाहिये जो कहानीका अुद्देश्य है।

यद्यपि कहानी द्वारा जीवन-संबंधी प्रश्नोंका अुत्तर देना तथा अुपदेश देना कुछ लेखकोंके अनुसार कहानीका अुद्देश्य होता है;

पर मुख्यतः अुसका अुद्देश्य मनोरंजन ही है। मनोरंजनकी हत्या करके अुपदेश देना सर्वथा अनुचित है।

कहानीका अंत भी अत्यंत सावधानीसे करना चाहिये। पाठककी अुत्सुकता कहानीके समाप्त होने तक बराबर बनाये रखनी चाहिये।

आधुनिक कहानियाँ बहुत कुछ कलाकी श्रेणीमें आ गयी हैं। अिसलिये अुनमें स्वाभाविकताके साथ साथ हृदयके आन्तरिक विचारों का चित्रण करना अत्यंत आवश्यक हो गया है। अैसा स्वाभाविक चित्रण ही हृदयस्पर्शी होता है। हृदयके आन्तरिक विचारोंके चित्रण करनेमे लेखकको मनोविज्ञानसे भली भाँति परिचित रहना चाहिये। पात्रके जीवनमें डूबकर ही लेखक अुसके विचारोंको स्पष्ट कर सकता है। घटना-प्रधान कहानियोंका भी महत्त्व है, किंतु हृदयके विचारोंका स्वाभाविक चित्रण करनेवाली, आन्तरिक द्वंद्वको व्यक्त करनेवाली कहानियाँ ही आजकल कलाकी दृष्टिसे अुत्तम मानी जाती हैं।

कुछ लोगोंका कहना है कि वास्तववाद और आदर्शवाद दोनोंको आधारभूत मानकर अुपन्यास, गल्प आदिकी रचना करनी चाहिये। कहानी-साहित्यका क्षेत्र सिर्फ मनोरंजन ही है, अैसा माननेवालोंकी संख्या भी कुछ कम नहीं है। आदर्शवाद, वास्तववाद और 'कलाके लिये कला' वाद आदि सभी वादोंका असर आजके कहानी-साहित्यपर हुआ है।

हमने जिन कहानियोका संग्रह किया है वे कला व भाषाकी दृष्टिसे प्रतिनिधिरूप हैं। हमारा क्षेत्र सीमित रहनेकी वजहसे सभी प्रमुख लेखकोंकी रचनाओंको हम स्थान नहीं दे सके हैं। प्रान्तीय भाषाओंकी जिन कहानियोंका अनुवाद हो चुका है अुनमेसे भी हमने कुछ कहानियाँ प्रतिनिधि-रूपमें अिस संग्रहमें ली है।

—संकलनकर्ता

कहानी-संग्रह—भाग ३

बिसाती

अुद्यानकी शैलमालाके नीचे अेक हरा भरा छोटा-सा गाँव है। बसन्तका सुन्दर समीर अुसे आलिंगन करके फूलोंके सौरभसे अुसके झोंपड़ोंको भर देता है। तलहटीके हिम-शीतल झरने अुसको अपने बाहु-पाशमें जकड़े हुअे हैं। अुस रमणीय प्रदेशमें अेक स्निग्ध संगीत निरन्तर चला करता है, जिसके भीतर बुलबुलोंका कलनाद, कम्प और लहर अुत्पन्न करता है।

दाड़िमके लाल फूलोंकी रँगीली छाया सन्ध्याकी अरुण किरणोंसे चमकीली हो रही थी। शीरीं अुसीके नीचे शिला-खण्डपर बैठी हुअी सामने गुलाबोंकी झुरमुट देख रही थी, जिसमें बहुत-से बुलबुल चहचहा रहे थे; समीरणके साथ छल-छलैया खेलते हुअे आकाशको अपने कलवरसे गुंजरित कर रहे थे।

शीरींने सहसा अपना अवगुंठन अुलट दिया। प्रकृति प्रसन्न हो हँस पड़ी। गुलाबोंके दलमें शीरींका मुख राजाके

समान सुशोभित था। मकरन्द मुँहमें भरे दो नील-भ्रमर अुस गुलाबसे अुड़नेमें असमर्थ थे, भौरोंके पर निस्पन्द थे। कँटीली झाड़ियोंकी कुछ परवाह न करते हुअे बुलबुलोंका अुनमें घुसना और अुड़ भागना शीरीं तन्मय होकर देख रही थी।

अुसकी सखी ज़लेखाके आनेसे अुसकी अेकान्त-भावना भंग हो गयी। अपना अवगुंठन अुलटते हुअे ज़लेखाने कहा—"शीरीं! वह तुम्हारे हाथोंपर बैठ जानेवाला बुलबुल आजकल नहीं दिखाअी देता?"

आह खींचकर शीरींने कहा—"कड़े शीतमें अपने दलके साथ मैदानकी ओर निकल गया। वसन्त तो आ गया, पर वह नहीं लौट आया।"

"सुना है कि ये सब हिन्दोस्तानमें बहुत दूर तक चले जाते हैं, क्या सच है शीरीं?"

"हाँ प्यारी! अिन्हें स्वाधीन विचरना अच्छा लगता है। अिनकी जाति बड़ी स्वतंत्रता-प्रिय है।"

"तूने अपनी घुँघराली अलकोंके पाशमें उसे क्यों न बाँध लिया?"

"मेरे पाश अुस पक्षीके लिये ढीले पड़ जाते थे।"

"अच्छा, लौट आयेगा, चिन्ता न कर। मैं घर जाती हूँ।"

शीरींने सिर हिला दिया।

जलेखा चली गयी।

* * *

जब पहाड़ी आकाशमें सन्ध्या अपने रँगीले पट फैला देती, जब विहंग केवल कलरव करते पंक्ति बाँधकर अुड़ते हुअे गुंजान-झाड़ियों की ओर लौटते और अनिलमें अुनके कोमल परोंसे लहर अुठती, जब समीर अपनी झोंकेदार तरंगोंमें बार-बार अन्धकारको खींच लाता, जब गुलाब अधिकाधिक सौरभ लुटाकर हरी चादरमें मुँह छिपा लेना चाहते थे, तब शीरींकी आशा-भरी दृष्टि कालिमासे अभिभूत होकर पलकों में छिपने लगी। वह जागते हुअे भी अेक स्वप्नकी कल्पना करने लगी।

हिन्दोस्तानके अेक समृद्धिशाली नगरकी अेक गलीमें अेक युवक पीठपर गट्ठर लादे घूम रहा है। परिश्रम और अनाहारसे अुसका मुख विवर्ण है; थककर वह किसी के द्वारपर बैठ गया है। कुछ बेचकर अुस दिनकी जीविका प्राप्त करने की अुत्कंठा अुसकी दयनीय बातों से टपक रही है। परन्तु वह गृहस्थ कहता है—"तुम्हें अुधार देना हो, तो दो; नहीं तो अपनी गठरी अुठाओ। समझे आगा?"

युवक कहता है—"मुझे अुधार देनेकी सामर्थ्य नहीं।"

"तो मुझे भी कुछ नहीं चाहिये।"

शीरीं अपनी अिस कल्पनासे चौंक अुठी। काफ़िलेके साथ अपनी सम्पत्ति लादकर खैबरके गिरि-संकटको वह अपनी भावनासे पादाक्रान्त करने लगी।

अुसकी अिच्छा हुअी कि हिन्दोस्तान के प्रत्येक गृहस्थ के पास हम अितना धन रख दें कि वे अनावश्यक होनेपर

भी अुस युवक की सब वस्तुओं का मूल्य देकर अुसका बोझ अुतार दें। परन्तु सरल शीरीं निस्सहाय थी। अुसके पिता अेक क्रूर पहाड़ी सरदार थे। अुसने अपना सिर झुका लिया। कुछ सोचने लगी।

सन्ध्या का अधिकार हो गया। कलरव वन्द हुआ। शीरींकी साँसोंके समान समीरकी गति अवरुद्ध हो अुठी। अुसकी पीठ शिलासे टिक गयी।

दासीने आकर अुसको प्रकृतिस्थ किया। अुसने कहा—"बेगम बुला रही हैं। चलिये, मेंहदी आ गयी।"

* * *

महीनों हो गये। शीरींका ब्याह अेक धनी सरदारसे हो गया। झरनेके किनारे शीरींके बागमें शवरी खिंची है। बसन्तका पवन अपने अेक-अेक थपेड़ेमें सैकड़ों फूलोंको रुला देता है। मधु-धारा बहने लगती है। बुलबुल अुसकी निर्दयतापर क्रन्दन करने लगते हैं। शीरीं सब सहन करती रही। सरदारका मुख अुत्साहपूर्ण था। सब होनेपर भी वह अेक सुन्दर प्रभात था।

अेक दुर्बल व लम्बा युवक पीठपर गट्ठर लादे सामने आकर वैठ गया। शीरींने अुसे देखा, पर वह किसीकी ओर देखता नहीं; अपना सामान खोलकर सजाने लगा।

सरदार अपनी प्रेयसीको अुपहार देनेके लिये काँचकी प्याली और कश्मीरके सामान छाँटने लगे।

शीरीं चुपचाप थी। अुसके हृदय-काननमें कलरवोंका क्रन्दन हो रहा था। सरदारने दाम पूछा। युवकने कहा—

"मैं अुपहार देता हूँ; बेचता नहीं। ये विलायती और कश्मीरी सामान मैंने चुनकर लिये हैं। अिनमें मूल्य ही नहीं, हृदय भी लगा है। ये दामपर नहीं बिकते।"

सरदारने तीक्ष्ण स्वरमें कहा—"तब मुझे न चाहिये, ले जाओ, अुठाओ।"

"अच्छा, अुठा ले जाअूँगा। मैं थका हुआ आ रहा हूँ, थोड़ा अवसर दीजिये, मैं हाथ-मुँह धो लूँ।"—कहकर युवक भरभरायी आँखोंको छिपाते हुअे अुठ गया।

सरदारने समझा, झरनेकी ओर गया होगा। विलम्ब हुआ, पर वह न आया। गहरी चोट और निर्मम व्यथाको वहन करते, कलेजा हाथसे पकड़े हुअे, शीरीं गुलाबकी झाड़ियोंकी ओर देखने लगी। परन्तु अुसकी आँसू-भरी आँखोंको कुछ न सूझता था। सरदारने प्रेमसे अुसकी पीठपर हाथ रखकर पूछा—"क्या देख रही हो?"

"मेरा अेक पालतू बुलबुल शीतमें हिन्दोस्तानकी ओर चला गया था। वह लौटकर आज सबेरे दिखलाअी पड़ा। पर जब वह पास आ गया और मैंने अुसे पकड़ना चहा, तो वह अुधर कोहकाफ़ की ओर भाग गया!" शीरींके स्वरमें कम्प था, फिर भी वे शब्द बहुत सँभलकर निकले थे। सरदारने हँसकर कहा—"फूलोंको बुलबुलकी खोज? आश्चर्य है।"

बिसाती अपना सामान छोड़ गया, फिर लौटकर नहीं आया। शीरींने बोझ तो अुतार लिया, पर दाम नहीं दिया।

प्रायश्चित्त

अगर कबरी बिल्ली घर-भरमें किसीसे प्रेम करती थी तो रामूकी बहूसे, और अगर रामूकी बहू घर-भरमें किसीसे घृणा करती थी तो कबरी बिल्लीसे। रामूकी बहू, दो महीना हुआ, मायकेसे प्रथम बार ससुराल आयी थी, पतिकी प्यारी और सासकी दुलारी, चौदह वर्षकी बालिका। भंडार-घरकी चाबी असकी करधनीमें लटकने लगी, नौकरोंपर असका हुक्म चलने लगा, और रामूकी बहू घरमें सब कुछ; सासजीने माला ली और पूजा-पाठमें मन लगाया।

लेकिन ठहरी चौदह वर्षकी बालिका, कभी भंडार-घर खुला है तो कभी भंडार-घरमें बैठे बैठे सो गयी। कबरी बिल्लीको मौका मिला, घी-दूधपर अब वह जुट गयी। रामूकी बहूकी जान आफतमें और कबरी बिल्लीके छक्के-पंजे। रामूकी बहू हाँड़ीमें घी रखते-रखते ऊँघ गयी और बचा हुआ घी कबरीके पेटमें। रामूकी बहू दूध ढककर मिसरानीको जिन्स देने गयी और दूध नदारद। अगर यह बात यहीं तक रह जाती तो भी बुरा न था, कबरी रामूकी बहूसे कुछ अैसी परक गयी थी कि रामूकी बहूके लिये खाना पीना दुश्वार। रामूकी बहूके कमरेमें रबड़ीसे भरी कटोरी पहुँची और रामू जब आये तब कटोरी साफ चटी हुअी। बाज़ारसे बालाअी आयी और जब तक रामूकी बहूने पान लगाया, बालाअी

ग़ायब। रामूकी बहूने तय करलिया कि या तो वही घरमें रहेगी या फिर कबरी बिल्ली ही। मोरचाबन्दी हो गयी और दोनों सतर्क। बिल्ली फँसानेका कटघरा आया, अुसमें दूध, बालाअी, चूहे, और भी बिल्लीको स्वादिष्ट लगनेवाले विविध प्रकारके व्यंजन रखे गये, लेकिन बिल्लीने अुधर निगाह तक न डाली। अिधर कबरीने सरगर्मी दिखलायी। अभी तक तो वह रामूकी बहूसे डरती थी; पर अब वह साथ लग गयी, लेकीन अितने फ़ासिलेपर कि रामूकी बहू अुसपर हाथ न लगा सके।

कबरीके हौसले बढ़ जानेसे रामूकी बहूको घरमें रहना मुश्किल हो गया। अुसे मिलती थी सासकी मीठी झिड़कियाँ, और पतिदेवको मिलता था रूखा-सूखा भोजन।

अेक दिन रामूकी बहूने रामूके लिये खीर बनायी। पिस्ता, बादाम, मखाने और तरह-तरहके मेवे दूधमें औटे गये, सोनेका वर्क चिपकाया गया और खीरसे भरकर कटोरा कमरेके अेक अैसे अूँचे ताकपर रखा गया जहाँ बिल्ली न पहुँच सके। रामूकी बहू अिसके बाद पान लगानेमें लग गयी।

अुधर कमरेमें बिल्ली आयी, ताकके नीचे खड़े होकर अुसने अूपर कटोरेकी ओर देखा, सूँघा, माल अच्छा है, ताक़की अूँचाअी अन्दाज़ी और रामूकी बहू पान लगा रही है। पान लगाकर रामूकी बहू सासजीको पान देने चली गयी और कबरीने छलाँग मारी, पंजा कटोरेमें लगा और कटोरा झनझनाहटकी आवाजके साथ फ़र्शपर।

आवाज़ रामूकी बहूके कानमें पहुँची। सासके सामने पान फेंककर वह दौड़ी, क्या देखती है कि फलका कटोरा टुकड़े टुकड़े, खीर फ़र्शपर और बिल्ली डटकर खीर अुड़ा रही है। रामूकी बहुको देखते ही कबरी चम्पत।

रामूकी बहूपर खून सवार हो गया, न रहे बाँस न बजे बाँसुरी। रामूकी बहूने कबरीकी हत्यापर कमर कस ली। रात-भर अुसे नींद न आयी। किस दाँवसे कबरीपर वार किया जाय कि फिर जिन्दा न बचे, यही पड़े-पड़े सोचती रही। सुबह हुअी और वह देखती है कि कबरी देहरीपर बैठी बड़े प्रेमसे अुसे देख रही है।

रामूकी बहूने कुछ सोचा, अिसके बाद मुस्कराती हुअी वह अुठी। कबरी रामूकी बहूके अुठते ही खिसक गयी। रामूकी बहू अेक कटोरा दूध कमरेके दरवाजेकी देहरीपर रखकर चली गयी। हाथमें पाटा लेकर वह लौटी तो देखती है कि कबरी दूधपर जुटी हुअी है। मौक़ा हाथमें आ गया। सारा बल लगाकर पाटा अुसने बिल्लीपर पटक दिया। कबरी न हिली न डुली, न चीख़ी न चिल्लायी, बस अेकदम अुलट गयी।

आवाज़ जो हुअी तो महरी झाड़ू छोड़कर, मिसरानी रसोअी छोड़कर और सास पूजा छोड़कर घटना-स्थलपर अुपस्थित हो गयीं। रामूकी बहू सर झुकाये हुअे अपराधिनीकी भाँति बातें सुन रही है।

महरी बोली—“अरे राम, बिल्ली तो मर गयी। माजी, बिल्लीकी हत्या बहूसे हो गयी; यह तो बुरा हुआ।”

मिसरानी बोली—"माजी, बिल्लीकी हत्या और आदमी-की हत्या बराबर है। हम तो रसोअी न बनायेंगी, जब तक बहूके सिर हत्या रहेगी।"

सासजी बोलीं—"हाँ, ठीक तो कहती हो, अब जब तक बहूके सरसे हत्या न अुतर जाय तब तक न कोअी पानी पी सकता है, न खाना खा सकता है। बहू, यह क्या कर डाला?"

महरीने कहा—"फिर क्या हो, कहो तो पण्डितजीको बुलाय लायी?"

सासकी जान में-जान आयी—"अरे हाँ, जल्दी दौड़के पण्डितजीको बुला ला।"

बिल्लीकी हत्याकी खबर बिजलीकी तरह पड़ोसमें फैल गयी। पड़ोसकी औरतोंका रामूके घरमें ताँता बँध गया। चारों तरफसे प्रश्नोंकी बौछार और रामूकी बहू सिर झुकाये बैठी।

पण्डित परमसुखको जब यह ख़बर मिली अुस समय वे पूजा कर रहे थे। ख़बर पाते ही वे अुठ पड़े। पण्डिताअिनसे मुस्कराते हुअे बोले—"भोजन न बनाना। लाला घासी-रामकी पतोहूने बिल्ली मार डाली। प्रायश्चित्त होगा, पक्वानोंपर हाथ फिरेगा।"

पण्डित परमसुख चौबे छोटे-से मोटे-से आदमी थे। लम्बाअी चार फीट दस अिञ्च और तोंदका घेरा अट्ठावन अिञ्च। चेहरा गोल मटोल, मूँछ बड़ी-बड़ी, रंग गोरा, चोटी कमर तक पहुँचती हुअी।

कहा जाता है कि मथुरामें जब पंसेरी खुराकवाले पण्डितोंको ढूँढ़ा जाता था तो पण्डित परमसुखजीको अुस लिस्टमें प्रथम स्थान दिया जाता था।

पण्डित परमसुख पहुँचे, और कोरम पूरा हूआ। पंचायत बैठी—सासजी, मिसरानी, किसनूकी मा, छन्नूकी दादी और पण्डित परमसुख। बाकी स्त्रियाँ बहूसे सहानुभूति प्रकट कर रही थीं।

किसनूकी माने कहा—"पण्डितजी, बिल्लीकी हत्या करनेसे कौन नरक मिलता है?"

पण्डित परमसुखने पत्रा देखते हुअे कहा—"बिल्लीकी हत्या अकेलेसे तो नरकका नाम नहीं बतलाया जा सकता, वह महूरत भी जब मालूम हो, जब बिल्लीकी हत्या हुअी तब नरकका पता लग सकता है।"

"यही कोअी सात बजे सुबह।"—मिसरानीजीने कहा।

पण्डित परमसुखने पत्रेके पन्ने अुलटे, अक्षरोंपर अुँगलियाँ चलायीं, मत्थेपर हाथ लगाया और कुछ सोचा। चेहरेपर धुँधलापन आया। माथेपर बल पड़े, नाक कुछ सिकुड़ी और स्वर गंभीर हो गया—"हरे कृष्ण! हरे कृष्ण! बड़ा बुरा हुआ, प्रातःकाल ब्राह्म-मुहूर्तमें बिल्लीकी हत्या! घोर कुम्भीपाक नरकका विधान है। रामूकी मा, यह तो बड़ा बुरा हुआ।"

रामूकी माकी आँखोंमें आँसू आ गये। "तो फिर पण्डितजी, अब क्या होगा, आप ही बतलायें।"

पण्डित परमसुख मुस्कराये — "रामूकी मा, चिन्ताकी कौन-सी बात है, पुरोहित फिर कौन दिनके लिये हैं ? शास्त्रोंमें प्रायश्चित्तका विधान है, सो प्रायश्चित्तसे सब कुछ ठीक हो जायगा।"

रामूकी माने कहा — "पण्डितजी, अिसीलिये तो आपको बुलवाया था, अब आगे बतलाओ कि क्या किया जाय ?"

"किया क्या जाय ! यही अेक सोनेकी बिल्ली बनवाकर बहूसे दान करवा दी जाय। जब तक बिल्ली न दे दी जायगी तब तक तो घर अपवित्र रहेगा, बिल्ली दान देनेके बाद अिक्कीस दिनका पाठ हो जाय।"

छन्नूकी दादी — "हाँ और क्या, पण्डितजी तो ठीक कहते हैं, बिल्ली अभी दान दे दी जाय और पाठ फिर हो जाय।"

रामूकी माने कहा — "तो पण्डितजी, कितने तोलेकी बिल्ली बनवायी जाय ?"

पण्डित परमसुख मुस्कराये, अपनी तोंदपर हाथ फेरते हुअे अुन्होंने कहा — "बिल्ली कितने तोलेकी बनवायी जाय ? अरे रामूकी मा, शास्त्रोंमें तो लिखा है कि बिल्लीके वजन-भर सोनेकी बिल्ली बनवायी जाय। लेकिन अब कलियुग आ गया है, धर्म-कर्मका नाश हो गया है, श्रद्धा नहीं रही। सो रामूकी मा, बिल्लीके तौल-भरकी बिल्ली तो क्या बनेगी, क्योंकि बिल्ली बीस-अिक्कीस सेरसे कमकी क्या होगी ? हाँ, कम-से-कम अिक्कीस तोलेकी बिल्ली बनवाके दान करवा दो, और आगे तो अपनी अपनी श्रद्धा !"

रामूकी माने आँखें फाड़कर पण्डित परमसुखको देखा—"अरे बाप रे! अिक्कीस तोला सोना! पण्डितजी, यह तो बहुत है, तोला-भरकी बिल्लीसे काम निकलेगा?"

पण्डित परमसुख हँस पड़े—"रामूकी मा! अेक तोला सोनेकी बिल्ली! अरे रुपयेका लोभ बहूसे बढ़ गया? बहूके सिर बड़ा पाप है—अिसमें अितना लोभ ठीक नहीं!"

मोल तोल शुरू हुआ और मामला ग्यारह तोलेकी बिल्लीपर ठीक हो गया।

अिसके बाद पूजा-पाठकी बात आयी। पण्डित परमसुखने कहा—"अुसमें क्या मुश्किल है, हमलोग किस दिनके लिये हैं? रामूकी मा, मैं पाठ कर दिया करूँगा, पूजाकी सामग्री आप हमारे घर भिजवा देना।"

"पूजाका सामान कितना लगेगा?"

"अरे, कम-से-कम सामानमें हम पूजा कर देंगे, दानके लिये करीब दस मन गेहूँ, अेक मन दाल, मन-भर तिल, पाँच मन जौ और पाँच मन चना, चार पसेरी घी, और मन-भर नमक भी लगेगा। बस, अितनेसे काम चल जायगा।"

"अरे बाप रे! अितना सामान पण्डितजी, अिसमें तो सौ-डेढ सौ रुपया खर्च हो जायगा।"—रामूकी माने रुआँसी होकर कहा।

फिर अिससे कममें तो काम न चलेगा। बिल्लीकी हत्या कितना बड़ा पाप है, रामूकी मा! खर्चको देखते वक्त पहिले बहूके पापकी तो देख लो! यह तो प्रायश्चित्त है,

कोअी हँसी खेल थोड़े ही है ? और जैसी जिसकी मरजादा, प्रायश्चित्तमें अुसे वैसा ख़र्च भी करना पड़ता है। आपलोग कोअी अैसे-वैसे थोड़े हैं, अरे सौ डेढ सौ रुपया आपलोगोंके हाथका मैल है।"

पण्डित परमसुखकी बातसे पंच प्रभावित हुअे। किसनू की माने कहा—"पण्डितजी ठीक कहते हैं, बिल्लीकी हत्या कोअी अैसा-वैसा पाप तो नहीं—बड़े पापके लिये बड़ा खर्च भी चाहिये।"

छन्नूकी दादीने कहा—"और नहीं तो क्या, दान-पुन्नसे ही पाप कटते हैं। दान-पुन्नमें किफ़ायत ठीक नहीं।"

मिसरानीने कहा—"और फिर माजी, आपलोग बड़े आदमी ठहरे, अितना ख़र्च कौन आपलोगोंको अखरेगा ?"

रामूकी माने अपने चारों ओर देखा—सभी पंच पण्डितजीके साथ। पण्डित परमसुख मुस्करा रहे थे। अुन्होंने कहा—"रामूकी मा, अेक तरफ़ तो बहूके लिये कुम्भीपाक नरक है और दूसरी तरफ़ तुम्हारे जिम्मे थोड़ा-सा खर्चा है। सो अुससे मुँह न मोड़ो।"

अेक ठंढी साँस लेते हुअे रामूकी माने कहा—"अब तो जो नाच नचाओगे, नाचना ही पड़ेगा।"

पण्डित परमसुख ज़रा कुछ बिगड़कर बोले—"रामूकी मा! यह तो खुशीकी बात है। अगर तुम्हें यह अखरता है तो न करो—मैं चला।" अितना कहकर पण्डितजीने पोथी-पत्रा बटोरा।

"अरे पण्डितजी, रामूकी माको कुछ नहीं अखरता—बेचारीको कितना दुख है—बिगड़ो न।" मिसरानी, छन्नूकी दादी और किसनूकी माने अेक स्वरमें कहा।

रामूकी माने पण्डितजीके पैर पकड़े—और पण्डितजीने अब जमकर आसन जमाया।

"और क्या हो?"

"अिक्कीस दिनके पाठके अिक्कीस रुपये और अिक्कीस दिन तक दोनों वक्त पाँच-पाँच ब्राह्मणोंको भोजन करवाना पड़ेगा।" कुछ रुककर पण्डित परमसुखने कहा—"सो अिसकी चिन्ता न करो, म अकेले दोनों समय भोजन कर लूँगा और मेरे अकेले भोजन करनेसे पाँच ब्राह्मणके भोजनका फल मिल जायगा।"

"यह तो पण्डितजी ठीक कहते है, पण्डितजीकी तोंद तो देखो।"—मिसरानीने मुस्कराते हुअे पण्डितजीपर व्यंग किया।

"अच्छा, तो फिर प्रायश्चित्तका प्रबन्ध करवाओ रामूकी मा, ग्यारह तोला सोना निकालो, मैं अुसकी बिल्ली बनवा लाअूँ। दो घण्टेमें मैं बनवाकर लौटूंगा। तब तक पूजाका प्रबन्ध कर रखो—और देखो, पूजाके लिये...."

पण्डितजीकी बात ख़तम भी न हुअी थी कि महरी हाँफती हुअी कमरेमें घुस आयी, और सब लोग चौंक अुठे। रामूकी माने घबड़ाकर कहा—"अरी क्या हुआ री?"

महरीने लड़खड़ाते स्वरमें कहा—"माजी, बिल्ली तो अुठकर भाग गयी!"

कविका त्याग

रात आधीसे अधिक बीत चुकी थी। आकाशपर तारोंकी सभा सुसज्जित थी। कवि अुन्हें देखता था और सोच सोचकर कुछ लिखता जाता था। वह कभी लेटता, कभी बैठता, कभी टहलता, और कभी जोशसे हाथोंकी मुट्ठियाँ कसकर रह जाता था। वह कविता लिख रहा था।

अिसी प्रकार रात्रि समाप्त हो गयी, परन्तु कविका गीत अभी अधूरा था। सूर्योदयकी लाली देखकर अुसपर निराशा-सी छा गयी, मानो वे अुसके जीवनके अंतिम क्षण हों। अुस समय अुसका मुख कुम्हलाया हुआ फूल था। आखें अुजड़ी हुअी सभा। कभी वह अपने गीतको देखता, कभी आकाशको; अुसका हृदय प्रातःकालके प्रकाशमें रात्रिके अंधकारको खोजता था, जिसमें तारे मुस्कराते थे, और मन्द चाँदनी अपनी क्षीण किरणों के लम्बे-लम्बे हाथ बढ़ाकर सोती हुअी सृष्टिके अचेत मस्तिष्कोंपर सुन्दर स्वप्नोंसे जादू करती थी। वह अिस जादूका गीत लिख रहा था। परन्तु अब प्रातःकाल हो चुका था। अकस्मात् कविके मस्तिष्कमें अेक विचार अुत्पन्न हुआ। अुसने कागज़-पेंसिल ली, और चल पड़ा। वहाँ अेकांत था। अुसने अपने हृदयके अन्धकार को बाहर निकाला, और अुस काल्पनिक अन्धकारमें गीतको पूरा किया। अुस समय अुसे अैसी प्रसन्नता हुअी मानो

कोअी राज्य मिल गया हो। अपने गीतको वह बार बार पढ़ता था और झूमता था। गाता था और प्रसन्न होता था। अैसा जान पड़ता था जैसे किसी बच्चेको सुन्दर रंगीन खिलौने मिल गये हों।

लाला अमरनाथ विद्या रसिक मनुष्य थे, पूरे 'अप् टु-डेट'। अुनसे और कविसे अतिशय मेल-मिलाप था। कवि निर्धन था और साथ ही यह कि ब्याह भी कर चुका था। अुसके अेक लड़का था, दो लड़कियाँ। प्रायः चिंतित रहता परन्तु जीवनकी बहुत-सी आवश्यकताओंके होनेपर भी अुसे कोअी काम करना अिष्ट न था। वह अिसमें अपनी मान-हानि समझता था। प्रायः कहा करता—"लोग कैसे मूर्ख हैं, थर्मामीटरसे हल्का काम लेना चाहते हैं।" लाला अमरनाथ अुसकी कवितापर लट्टू थे। कभी अुसकी कविताका अेक पद भी सुन लेते तो मस्त होकर झूमने लगते। धनाढ्य पुरुष थे; रुपये पैसेकी कुछ परवा न थी। वे अुदारतासे कविकी सहायता किया करते थे। अिसमें अुन्हें हार्दिक आनन्द प्राप्त होता था।

कविने अुन्हें देखा, तो आँखोंमें रौनक आ गयी, श्रद्धा भावसे बोला—"अेक गीत लिख रहा था।"

"क्या शीर्षक है?"

"चन्द्र-लोक।"

"वाह वाह! शीर्षक तो बहुत अच्छा है, देखूँ, कैसा लिखा है।"

कविने गीत लाला अमरनाथके हाथमें दे दिया और रुक रुककर कहा—" सारी रात जागता रहा हूँ। "

" हूँ "

लाला अमरनाथने कविता पढ़ी तो अुनके आश्चर्यकी थाह न थी।

अुन्होंने कविताकी सैकड़ों पुस्तकें देखी थीं। बीसों कवियोंसे अुनका परिचय था, परन्तु जो कल्पना, जो सौन्दर्य जो प्रभाव अिस कवितामें था, वह अिससे पहले देखनेमें न आया था। वे अपने आपमें मग्न हो गये। कागज़ अुनके हाथोंमें काँपने लगा। अुन्होंने कविकी ओर श्रद्धा-भरी दृष्टिसे देखा, मानो वह कोअी देवता है; और आनन्दके जोशमें काँपते हुअे कहा—" कवि ! "

२

कवि अुनकी अवस्थाको समझ गया। अुसे अपनी आत्माकी गहराअियोंमें सच्चे आनन्द और अभिमानका अनुभव हुआ। अुसने धड़कते हुअे हृदयसे अुत्तर दिया—" जी ! "

" यह कविता तुम्हारी है ? "

कविको अैसा जान पड़ा जैसे किसीने गाली दे दी हो! लज्जाने मुँह लाल कर दिया। अुसने अेक विचित्र कटाक्षसे लाला अमरनाथकी ओर देखा, और बोला—" हाँ मेरी है।"

" मैने अैसी कविता आज तक नहीं देखी। "

कविका मस्तिष्क आकाशपर था। अिस समय अुसे अैसा प्रतीत हुआ मानो संसार अपनी अगणित जिह्वाओंसे

अुसकी कविताकी प्रशंसा कर रहा है। तथापि अुसने धीर भावको न छोड़ा। मनुष्य जो सोचता है, प्रायः अुसे प्रकट करनेको ओछापन समझता है। कविने सिर झुकाया और अुत्तर दिया—" यह आपका बड़प्पन है।"

लाला अमरनाथने जोशसे कहा—" बड़प्पन है? नहीं। मैं तुम्हारी अनुचित प्रशंसा नहीं करता। तुम सचमुच अिस योग्य हो। तुम अपने गुणोंसे अपरिचित हो। परन्तु मेरी दूरदर्शी आँखें साफ देख रही हैं कि कीर्ति तुम्हारी ओर बड़े वेगसे दौड़ती हुअी आ रही है। और वह समय अति निकट है जब सफलता तुम्हारे लिये अपने सुवर्ण द्वार खोल देगी; विस्मित न हो, आश्चर्य न करो। कवि, तुम वास्तवमें कवि हो। तुम्हारी कल्पना गगन मण्डलकी अूँचाअियोंको छूती है, और तुम्हारा ज्ञान प्रकृतिकी नाअीं विस्तृत है। नवीनता तुम्हारी कविताका सौन्दर्य है, और प्रभाव अंग-विशेष है। मैं सच कहता हूँ, तुम्हारी कवितापर लोग हठात् वाह वाह करेंगे, और संसार तुम्हारा आदर करनेको विवश होगा।"

प्रशंसाके वचन साहस बढ़ानेमें अचूक ओषधिका काम देते हैं। कविने अभिमानसे सिर अूँचा किया, और कहा— " मैंने अैसे गीत और भी तैयार किये हैं।"

" कितने?"

" अिससे पहले ग्यारह बना चुका हूँ। यह बारहवां है।"

लाला अमरनाथपर जैसे किसीने जादू कर दिया। अुनको अैसी प्रसन्नता हुअी, जैसे किसी निर्धनको दबा हुआ खज़ाना मिल गया हो। बच्चोंकी-सी अधीरतासे बोले— "वे कहाँ हैं?"

कविने अुत्तर दिया—"घरपर है।"

"चलो, मै अभी देखना चाहता हूँ।"

कविका शरीर रात-भर जागनेसे चूर-चूर हो रहा था। परन्तु कविताके दिखलानेके शौकने थके हुअे पैरोंको पर लगा दिये। दोनों अुड़ते हुअे घर पहुँचे। लाला अमरनाथने गीत देखे तो सन्नाटेमें आ गये, जैसे कोयलमें हीरे मिल गये हों। वे कविपर मुग्ध थे और अुसकी कवितापर लट्टू। परन्तु अुनको यह आशा न थी कि कवि अितनी अुच्च कोटिपर पहुँच गया होगा। वह 'दर्पण' नामक अेक अत्युत्तम सचित्र मासिक पत्र निकालनेके विचारमें थे। कविकी कविताअें देखकर यह विचार पक्का हो गया, जोशसे बोले— "'दर्पण' तुम्हें कीर्तिकी पहली पंक्तिमें स्थान दिलायेगा।"

कविके मस्तिष्कमें आशाकी किरणका प्रकाश हुआ, जैसे अँधेरी रातमें बिजली चमक जाती है। अुसने सहर्ष धड़कते हुअे हृदय और काँपते हुअे हाथोंसे गीत अमरनाथके हाथमें दे दिये।

३

अिससे दूसरे दिन कवि सोकर अुठा तो कमरमें दर्द था। परन्तु बेपरवाही कवियोंका अेक विशेष अंग है। अुसने

अिस ओर तनिक भी ध्यान न दिया और मानवीय प्रकृतिपर विचार करनेमें लग गया। वह ग्रंथोंके पढ़नेकी अपेक्षा अिस गौरवको बहुत मानता था। अिस प्रकार दो चार दिन बीत गये। दर्द बढ़ता गया। यहाँ तक कि लेटना और बैठना कठिन हो गया। कविको कुछ चिंता हुअी। भागा भागा वैद्यके पास पहुँचा। पता लगा फोड़ा है। वैद्यने मरहम लगानेको दिया। परन्तु अुससे भी कुछ लाभ न हुआ। यहाँ तक कि रातको सोना भी कठिन हो गया। अुस समय कविको विचार आया, किसी डॉक्टरको दिखाना चाहिये। लाला अमरनाथको लेकर वह डॉक्टर कुँवर सेनके पास पहुँचा। डॉक्टर साहब लाला अमरनाथके मित्रोंमेंसे थे। अुन्होंने बड़े परिश्रमसे फोड़ा देखा, और चिंतित-से होकर बोले—"आपने बड़ी बेपरवाही की, यह कारबंकल है।"

लाला अमरनाथने चौंककर कहा—"वह क्या होता है?"

"अेक सख्त किस्मका फोड़ा।"

"अुसका अुपाय भी कुछ है या नहीं?"

डॉक्टर साहब कुछ देर चुप रहे, और फिर अुत्तर दिया—

"केवल अेक अुपाय है। मरहमसे यह अच्छा न होगा।"

कविने अधीर होकर पूछा—"क्या?"

"ऑपरेशन।"

कविकी आँखोंके सामने मौत फिर गयी। घबराकर बोला—“ ऑपरेशन सख्त तो नहीं ? ”

“ मैं आपको धोखेमें रखना नहीं चाहता। ऑपरेशन सख्त है। यदि आप पहले आ जाते, तो यह अितना भयानक रूप न धारण करता। ”

लाला अमरनाथका मुख इन्द्रधनुषकी मूर्ति था। घबराकर बोले—“ क्या अिसके सिवा और कोअी अुपाय नहीं ? ”

“ कोअी नहीं। ”

“ तो ऑपरेशन करवा देना चाहिये ? ”

“ अवश्य और जल्दी। साधारण विलम्ब भी हानि पहुँचा सकता है। ”

लाला अमरनाथने पूछा—“ ऑपरेशन किससे करवाना अुचित होगा ? ”

“ मेरे विचारमें सरकारी अस्पताल सबसे अच्छा स्थान है। ”

लाला अमरनाथने कविकी ओर करुणा-दृष्टिसे देखकर कहा—

“ तो करवा लो। ”

कवि तनकर खड़ा हो गया, मानो अुसको साहसने पैरों तले कुचल डाला। अिस समय अुसके मुखपर निर्भयताके चिन्ह थे। बाहरसे बोला—“ साधारण बात है। ऑपरेशन कोअी अनोखी बात तो नहीं रही। प्रतिदिन होते रहते हैं। ”

और वह दूसरे दिन ऑपरेशन रूममें मेजपर लेटा हुआ था।

४

अेकाअेक सर्जन साहब घबराये हुअे बाहर निकले। अमरनाथका कलेजा धड़कने लगा। अुन्होंने आगे बढ़कर पूछा—"साहब, ऑपरेशन हो गया?"

सर्जनके मस्तकसे पसीनेकी बूँदें टपक रही थीं—"टुम अुसका कौन होटा है?"

"मैं अुसका मित्र हूँ। अुसका क्या हाल है?"

"हार्ट फ़ेल हो गया!"

अमरनाथपर जैसे बिजली गिर पड़ी, चिल्लाकर बोले—"क्या कहा आपने?"

"माने! अुसका हार्ट फ़ेल हो गया। दिलका धड़कना रुक गया।"

"तो वह मर गया?"

"बस! हमको यह 'होप' न था।"

कविकी स्त्री सुशीला अमरनाथसे कुछ दूर खड़ी थी, यह सुनकर पास आ गयी, और रोती हुअी बोली—"भाअी, मुझे धोखेमें न रक्खो; जो बात हो, साफ़ साफ़ कह दो।"

अमरनाथका कविसे हार्दिक प्रेम था। वे अुसे अिस प्रकार चाहते थे, जैसे भाअी भाअीको चाहता है। और अितना ही नहीं, अुन्हें अुससे बड़ी बड़ी आशाअें थीं। प्रायः सोचा करते थे, यह भारतवर्षका नाम निकालेगा। अिसकी

कविता टैगोर और अनातोले फ्रांसके समान है। वे जब अुसकी 'चन्द्र-लोक' को देखते तब मतवाले हो जाते थे। अिस समय सर्जनके शब्दने अुनके कलेजेपर अंगारे रख दिये थे। अुनको अेकाअेक विश्वास न आया कि कवि सचमुच मर गया है। अुन्होंने रेतकी दीवार खड़ी की। अुनकी स्त्रीके प्रश्नका अुत्तर न दिया, और दौड़ते हुअे कमरेमें घुस गये। कवि मेज़पर लेटा हुआ था और सर्जन निराशाके साथ सिर हिला रहा था। रेतकी दीवार गिर गयी। अमरनाथके हृदय-पर कटारें चल गयीं। सोचने लगे, कैसा सुन्दर तारा था, किन्तु अुदय होनेसे पहले ही अस्त हो गया। अिससे क्या क्या आशाअें थीं, सब धूलमें मिल गयीं। सुना था, पवित्र और पुण्यात्मा जीव अिस पापमय जगत्में अधिक समय तक नहीं ठहरते। अिस समय अिसका समर्थन हो गया।

अमरनाथ बाहर निकले, तो मुखपर सफ़ेदी छा रही थी। सुशीला सामने आयी, वह निराशाकी मूर्ति थी। अुसकी ऑखें अिस प्रकार खुली थीं मानो आत्माकी सारी शक्तियाँ आँखोंमें अिकट्ठी होकर किसी बातकी प्रतीक्षा कर रही हों। अुसने अमरनाथको देखा, तो अधीर होकर बोली—

"बोलो, क्या हुआ?"

अमरनाथकी आँखोंमें आँसू आ गये। सुशीलाको अुत्तर मिल गया। अुसने अपने दोनों हाथ सिरपर दे मारे, और वह पछाड़ खाकर पृथ्वीपर गिर गयी।

अमरनाथ और भी घबरा गये। सुशीलाको सुध आयी,

तो अुसने आकाश सिरपर अुठा लिया। अुसका करुण विलाप अमरनाथके घावोंपर नमकका काम कर गया। अुनको साहस न हुआ कि अुसकी ओर देख सकें। अुसका रुदन हृदयको चीर देनेवाला था, जिसको सुनकर अुनकी आत्मा थर्रा अुठी। अुन्होंने जेबसे सौ-रुपयेके नोट निकाले और अुसके हाथमें देकर वे अैसे भागे, जैसे कोअी बन्दूक लेकर अुनके पीछे आ रहा हो। यह दृश्य अुनके कोमल हृदयके लिये असह्य था। घर जाकर सारी रात रोते रहे। अुनको अिस बातका निश्चय हो गया कि कविकी स्त्री अिस मृत्युका हेतु मुझे समझ रही है। अतअेव अुसके सामने जाते हुअे डरते थे। सहानुभूतिका सच्चा भाव झूठे वहमको दूर न कर सका।

कअी दिन व्यतीत हो गये। अमरनाथके हृदयसे कविकी असमय और दुःखमय मृत्युका शोक मिटता गया। घायल हृदयोंके लिये समय बहुत गुणकारी मरहम है। प्रातःकाल था; प्रेस कर्मचारी 'दर्पण' का अंतिम प्रूफ़ लेकर आया। अुसमें कविकी कविता थी। अमरनाथके घाव हरे हो गये। कवि प्रायः कहा करता था कि कविकी संतान अुसकी कविता है। अमरनाथको यह कथन याद आ गया। कविकी कविता देखकर अुनको वही दुःख हुआ जो किसी प्यारे मित्रके अनाथ बच्चेको देखकर हो सकता है। अुन्होंने ठण्डी साँस भरकर प्रूफ़ देखना आरंभ किया! कवितासे नवीन रस टपकने लगा। सहसा अुनके हृदयमें अेक पापपूर्ण भावनाने

सिर अुठाया। अुन्होंने कुछ समय तक विचार किया, और फिर काँपती हुअी लेखनीसे कविका नाम काटकर अुसके स्थानमें अपना नाम लिख दिया। मनुष्यका हृदय अेक अथाह सागर है, जहाँ कमलके फूलोंके साथ रक्तकी प्यासी जोंकें भी अुत्पन्न होती रहती हैं।

५

'दर्पण' का पहला अंक निकला तो पढ़े-लिखे संसारमें धूम मच गयी। लोग देखते थे, और फूले न समाते थे। 'दर्पण' भाव और भाषा दोनों प्रकारसे अत्युत्तम था, और विशेषतः 'चन्द्रलोक' की काव्य-मालाकी पहली कवितापर तो काव्य-संसार लट्टू हो गया। अेक प्रसिद्ध मासिक पत्रने ही अुसकी समालोचना करते हुअे लिखा—

"यों तो 'दर्पण' का अेक-अेक पृष्ठ रत्न-भाण्डारसे कम नहीं, परन्तु 'चन्द्रलोक'-की पहली कविता देखकर तो हृदय नाचने लगता है। अिसकी अेक-अेक पंक्ति में 'अधीर' महाशयने जादू भर दिया है, और रसिकताकी नदी बहा दी है। सुना करते थे कि कविता हृदयके गहन भावोंका विशद चित्र है। यह कविता देखकर अिस कथनका समर्थन हो गया। निस्सन्देह, 'अधीर' महाशयकी ये कविताअें हिन्दी भाषाको फ्रांसीसी और अँग्रेजीके समान अुच्च कोटिपर ले जायँगी। 'अधीर' महाशय साहित्यके आकाशपर सूर्यकी नाअीं अेकाअेक चमके हैं और अेक ही कवितासे कवियोंकी पंक्तिमें शिरोमणि हो गये हैं।"

अेक दूसरे समाचार-पत्रने लिखा—

"'अधीर' महाशयकी कविता क्या है, अेक जादू-भरा सौन्दर्य है। हिन्दी भाषाका सौभाग्य समझना चाहिये कि अिसमें अैसे सूक्ष्म भावोंके वर्णन करनेवाले अुत्पन्न हो गये हैं, जिनपर भावी संतति अुचित रूपसे अभिमान करेगी। हमें दृढ़ विश्वास है कि यदि यह कविता अिसी सुन्दरतासे पूरी हो गयी तो अिसे हिन्दीमें वही दर्जा प्राप्त हो जायगा जो संस्कृतमें 'शकुन्तला'-को, अँग्रेजीमें 'पैराडाअीज़ लास्ट'-को और बंग भाषामें 'गीतांजलि'-को प्राप्त है। 'अधीर'-का नाम अिस कवितासे अटल हो जायगा।"

और अितना ही नहीं, अिस कविताका अनुवाद बँगला मराठी, गुजराती, अँग्रेजी और फ्रांसीसी पत्रोंमें प्रकाशित हुआ, और प्रशंसाके साथ। अमरनाथ जिस पत्रको देखते अुसमें अपना अुल्लेख पाते। अिससे अुनकी आत्मा गद्गद हो जाती, परन्तु कभी हृदयमें अेक धीमी-सी आवाज सुनाअी दे जाती थी, "तू डाकू है।" अमरनाथ अिस अन्तःकरणकी आवाज़को सुनते तो चौंक अुठते, परन्तु फिर दृढ़ संकल्पके साथ अुसको अन्दर-ही-अन्दर दबा देते।

अिसी प्रकार अेक वर्ष बीत गया। लाला अमरनाथका नाम भारतसे निकलकर यूरोप तक पहुँच गया। अँग्रेजी पत्रोंमें अुनकी कलापर लेख प्रकाशित हुअे। मासिक पत्रोंने अुनके फ़ोटो दिये। कविता पूरी हुअी तो प्रकाशक अुसपर अिस प्रकार टूटे जैसे पतंग दीपकपर टूटते हैं। अँग्रेजी

पब्लीशरोंने अनुवादके लिये बड़ी बड़ी रक़में भेट कीं। अमरनाथके पैर भूमिपर न लगते थे! परन्तु जब कभी अपनी करतूत याद आती तब प्राण सूख जाते थे, जिस प्रकार विवाहकी रंगरेलियोमें मृत्युका विचार आनन्दको किरकिरा कर देता है। परन्तु अुन्होंने अपने मृतक मित्रको सर्वथा भुला दिया हो, यह बात न थी। वे अुसकी स्त्रीके नाम हर महीने पचास रुपयेका मनीआर्डर करा दिया करते थे। वे अपना कर्तव्य समझते थे।

६

रात्रिका समय था। कविके मकानमें शोक छाया हुआ था। वह मौतसे तो बच गया था, परन्तु पांच मीलकी दूरीपर अपने गाँव चला आया था और मृतकके समान वर्ष-भरसे खाटपर पड़ा था। अिस रोगने अुसके शरीरका रक्त चूस लिया था। अब वह केवल हड्डियोंका पिंजर रह गया था। दिन रात चारपाअीपर लेटा रहनेके कारण अुसका स्वभाव भी चिड़चिडा हो गया था। अिसपर अमरनाथका अेक बार भी न आना अुसकी क्रोधाग्निपर तेलका काम कर गया। आठों पहर दुखी रहता था और अमरनाथको गालियाँ देता रहता था। सुशीला समझाती, "नहीं आते तो क्या हुआ, कुछ तुम्हारे शत्रु तो नहीं हो गये। पचास रुपया मासिक भेज रहे हैं, नहीं तो दवाके लिये भी तरसते फिरते। क्या जाने, किसी आवश्यक कार्यमें लगे हों।" कवि यह सुनता तो तिलमिला अुठता और

कहता—“ रुपया वापस दिया जा सकता है, परन्तु सहानुभूतिके दो वचन वह ऋण है जिसे चुकाना मनुष्यकी शक्तिसे बाहर है।” यदि अुसके वशमें होता तो वह रुपये वापस कर देता। अुपेक्षा-भाव मनुष्यके लिये अेक निकृष्टतर व्यवहार है। वह गालियाँ सह सकता है, मार खा सकता है; परन्तु अुपेक्षा नहीं सह सकता। कवि अिसी प्रकृतिका मनुष्य था।

रात्रिका समय था। कविके मकानमें अेक मिट्टीका दीपक जल रहा था, जैसे निराशाकी अवस्थामें आशाकी किरण टिमटिमा रही हो। चारपाओीपर लेटा हुआ था और सोच रहा था, परमेश्वर जाने, ‘चन्द्रलोक’–का क्या बना। अुसे यह भी ज्ञान न था कि ‘दर्पण’ निकला भी है या नहीं। अिस कवितासे क्या क्या आशाअें थीं। रोगने सब मिट्टीमें मिला दी। अितनेमें दरवाजा खुला। कविका अेक मित्र रत्नलाल अन्दर आया। अुसके हाथमें अेक सजिल्द पुस्तक थी। कविने पूछा—“यह क्या है ?”

“ ‘दर्पण’ का फ़ाओील।”

कविका कलेजा धड़कने लगा। अुसने विस्मित होकर पूछा—

“ यह क्या ‘दर्पण’ का फ़ाओील ? ”

“ हाँ ! देखोगे ? ”

“ अवश्य ! ज़रा दीपक अिधर ले आओ।”

बच्चे भूखसे बिलबिला रहे थे। सुशीला अुनके लिये रोटी पका रही थी। आटेका पेडा बनाते-बनाते बोली—"अब क्या पुस्तक पढ़ोगे? हकीमने मना किया है, कहीं फिर बुखार न हो जाय।"

परन्तु कविने सुना अनसुना कर दिया, और 'दर्पण' का फाअील देखने लगा। अपनी पहली कविता देखकर अुनका चेहरा खिल गया, जैसे फूलकी कली। अेक-अेक पद पढ़ता था और सिर धुनता था। सोचता, क्या यह मेरे मस्तिष्ककी रचना है? कैसा निरालापन है, कैसे अूँचे विचार! अेक अेक विचारमें आकाशके तारे तोडकर रख दिये गये हैं। अुसको अपने भूतकालपर अीर्ष्या होने लगी। क्या अब भी बुद्धिको यह कला प्राप्त है? हृदय शोकमें डूब गया।

अेकाअेक कविताकी समाप्तिपर दृष्टि गयी। अमरनाथ 'अधीर'-का नाम पढ़कर कविके कलेजेमें जैसे किसीने गोली मार दी। अुसको अुनसे अैसी आशा न थी। अुसको यह विचार भी न हो सकता था कि अमरनाथ अितने पतित हो सकते हैं। अपने परिश्रमपर यह डाका देखकर कविका रक्त अुबलने लगा और आँखोंसे अग्निके चिनगारे निकलने लगे। वह क्रोधसे तकियेका सहारा लेकर बैठ गया, और अपने मित्रसे बोला—"कागज़ और कलम-दावात लाओ। मैं अेक गीत लिखूँगा।"

अिससे पहले वही कअी बार गीत लिखनेको तैयार

हुआ, परन्तु दुर्बलताने अुसके अिस विचारको पूरा न होने दिया। रत्नलालने अुत्तर दिया—" रहने दो, तुम्हारा मस्तिष्क काम न कर सकेगा।"

कविने अपने हाथकी मुट्ठियाँ कस लीं और भूखे शेरकी नाअीं गरजकर कहा—" तुम कलम-दावात लाओ। मैं लिख सकूँगा।"

रत्नलालने मैशीनके समान आज्ञा-पालन किया। कवि बोला—" शीर्षक लिखो, 'लुटी हुअी कीर्ति'।"

रत्नलालने लिखकर कहा—" लिखाअिये।"

कविने लिखवाना आरंभ किया। कविताका स्रोत खुल गया! जिस प्रकार वर्षाके दिनोंमें नदी-नालोंमें बाढ़ आ जाती है, अुसी प्रकार अिस समय कविताका प्रवाह वेगसे बह रहा था। विचार आप-से-आप ग्रथित हो रहे थे। अुसे सोचनेकी आवश्यकता न थी। परन्तु कविता साँचेमें ढली हुअी थी, मानो जिह्वापर सरस्वती आकर बैठ गयी थी। क्या सुलझे हुअे विचार थे, कैसे प्रभावशाली भाव! पद पदसे अग्निके चिनगारे निकल रहे थे। जिस प्रकार नव-वधूका सुहाग अुजड़ जानेपर अुसका हृदय-वेधी चीत्कार करुणा-भरे हृदयोंमें हलचल मचा देता है, अुसी प्रकार अिस कविताको देखकर मस्तिष्क खौलने लगता था, और हृदयमें विचार विश्वास बनकर बैठ जाता था कि कोअी अत्याचार पीडित अत्याचारीके विरुद्ध पुकार कर रहा है।

अेकाअेक दरवाजा खुला और अमरनाथ अन्दर आये।

अिस समय अुनका मुख मण्डल अस्त होते हुअे सूर्यके समान लाल था। कविने अुनको देखा तो चौंक पड़े, जैसे पाश-बद्ध पक्षी व्याधको देखकर चौंक अुठता है। कविने घृणासे मुँह फेर लिया, परन्तु अमरनाथने अुसकी परवाह न की और वे रोते रोते कविके पैरोंसे लिपट गये, जैसे दोषी बालक पिताकी गोदमें मुँह छिपाकर रोता है।

रत्नलाल और सुशीला दोनों आश्चर्यमें थे। कविने रुखाअीसे कहा—"यह क्या करते हो?"

अमरनाथने अुत्तर दिया—"मैंने तुम्हारा अपराध किया है, जब तक क्षमा न करोगे, पैर न छोड़ूँगा। मुझे आज ही मालूम हुआ है कि तुम जीवित हो, नहीं तो यह पाप न होता।"

कविने कुछ देर सोचा और कहा—"तुम्हें लज्जा तो न आयी होगी?"

"यह कुछ न पूछो, अब क्षमा करदो।"

"प्रकृतिके कान क्षमाके नामसे अपरिचित हैं। प्रायश्चित्त करो।"

"वह मैं कर दूँगा।"

"परन्तु कैसे?"

अमरनाथने जेबसे अेक कागज निकाला और कविके हाथमें रख दिया। कविने अुसे पढ़ा और स्तंभित रह गया—"क्या तुम यह नोट प्रकाशित कर दोगे?"

"अिसके सिवा और अुपाय ही क्या है?"

"अितना यश छोड़ दोगे ?"

"छोड दूँगा।"

"तुम्हारी निन्दा होगी। लोग क्या कहेंगे ?"

अमरनाथने आग्रहके साथ कहा—"चाहे कुछ भी कहें। मैं अपने दोषको स्वीकार करूँगा। अिससे मेरा अन्तःकरण शान्त हो जायगा, कवि ! संसार मुझसे अिर्ष्या करता है, परन्तु मुझे रातको नींद नहीं आती। मैंने तुम्हारे परिश्रमका लाभ अुठाया है, तुम्हारी रचनाओंने मेरा नाम योरप तक पहुँचा दिया है। परन्तु तुम यह कीर्ति, यह नाम, अेक दिनमें मुझसे वापस ले सकते हो। मैं अुस कौअेके समान हूँ जिसने मोरके पंख लगाकर सुन्दर प्रसिद्ध होना चाहा था। तुम्हारी कविताओंका भाण्डार समाप्त हो चुका है, अब मैं शुष्क स्रोत हूँ। संसार मुझसे नये विचार, नये भाव माँगेगा। मैं अुसे क्या दे सकता हूँ ?—नहीं नहीं, मैं अपना पाप स्वीकार कर लूँगा, और तुम्हारी कीर्ति तुम्हें अर्पण करूँगा। बोलो, मुझे क्षमा कर दोगे ?"

कविका हृदय भर आया। अुसके नेत्रोंमें आँसू लहराने लगे। अुन आँसुओंमें हृदयकी घृणा बह गयी। अुसने सच्चे हृदयसे अुत्तर दिया—"यह न करो, मैं तुम्हें क्षमा करता हूँ।"

अमरनाथ तनकर खड़े हो गये और बोले—"प्राय-श्चित्त किये बिना मुझे शान्ति न मिलेगी।"

यह कहकर जेबसे अुन्होंने नोटोंका अेक बंडल निकाला और कविको देकर कहा—"यह तुम्हारी दौलत है।"

कविने गिना, तीन हज़ारके नोट थे, पूछा—"ये कैसे हैं?"

"अँग्रेजी अेडीशनकी रायल्टी है। अिसे स्थायी आय समझो। मैंने पब्लिशरको सूचना दे दी है कि भविष्यमें रायल्टी तुम्हें सीधी भेजी जाय।"

कविकी आँखोंमें आँसू भर आये। वह अमरनाथके गलेसे लिपटकर रोने लगा।

७

दिन चढ़ा तो कविकी अवस्था बहुत-कुछ बदल चुकी थी। अितनेमें अमरनाथका अेक नौकर आया। अुसके मुखका रंग अुड़ा था। आते ही बोला—"लालाजी चल बसे।"

कविका कलेजा मुँहको आ गया। अुसने जख्मी पक्षीकी नाअीं तड़पकर कहा—"क्या कहा तुमने?"

"लालाजी चल बसे। रातको कुछ खा लिया।"

कविके हृदयमें क्या क्या अुमंगें भरी हुअी थीं, सबपर पानी फिर गया। अमरनाथकी भलाअियाँ सामने आ गयीं। कैसा देवता मनुष्य था! पापका प्रायश्चित्त किस शानसे कर गया! हाथ आया हुआ धन किस सुगमतासे अर्पण कर गया! और अितना ही नहीं, मेरी कीर्ति मुझे वापस दे गया। अपने पापको अपने हाथ स्वीकार गया। कविका हृदय रोने लगा।

सहसा विचार आया, अब 'चन्द्रलोक' के लेखक होनेका दावा करना ओछापन है। वह मेरे साथ अितनी भलाई करता था, क्या अुसके शवका अपमान करूँगा?

कविने अुदारताका प्रमाण देनेका निश्चय कर लिया, और टाँगेमें बैठकर वर्ष-भरके रोगके पश्चात् पहली बार शहरके श्मशानमें पहुँचा। वहाँ नगर-भरके बड़े बड़े विद्वान मौजूद थे। कविने 'अधीरकी कविता'-पर अेक ओजस्विनी वक्तृता दी और अुसकी प्रशंसामें कोपके सुन्दर और रसीले शब्द समाप्त कर दिये।

दूसरे मासका 'दर्पण' कविकी अेडीटरीमें प्रकाशित हुआ। अुसमें स्वर्गवासी 'अधीर'-के नामसे अेक हृदय-वेधक कविता प्रकाशित हुअी जिसका शीर्षक 'लुटी हुअी कीर्ति' था, और कविकी ओरसे अेक छोटा-सा नोट निकला—

"'अधीर' मर गये, परन्तु अुनकी कविता अमर है। पाठक यह पढ़कर प्रसन्न होंगे कि 'अधीर' अपने पीछे कविताओंका अेक बहुत बड़ा अप्रकाशित भाण्डार छोड़ गये हैं और ये कविताअें 'दर्पण'-में क्रमशः निकलती रहेंगी।"

अिसके पश्चात् कविने जो कविता लिखी वह 'अधीर'-के नामसे प्रकाशित हुअी। कैसा अुच्च बलिदान है, कैसा निःस्वार्थत्याग! संसारमें रुपया-पैसा त्यागनेवालोंकी कमी नहीं। परन्तु अिन सबके सामने अेक लालसा होती है—अेक कामना कि हम मर जायँ, परन्तु हमारा नाम प्रसिद्ध हो जाय, जो अजर-अमर हो। परन्तु अिस नामका त्याग करनेवाले कितने हैं?

कविने मित्रके लिये अपने नामको निछावर किया।

शत्रु

ज्ञानको अेक रात सोते समय भगवानने स्वप्नमें दर्शन दिये और कहा—" ज्ञान, मैंने तुम्हें अपना प्रतिनिधि बनाकर संसारमें भेजा है। अुठो, संसारका पुनर्निर्माण करो।"

ज्ञान जाग पड़ा। अुसने देखा, संसार अन्धकारमें पड़ा है और मानव-जाति अुस अन्धकारमें पथभ्रष्ट होकर विनाश की ओर बढ़ती चली जा रही है। वह अीश्वरका प्रतिनिधि है, तो अुसे मानव-जातिको पथपर लाना होगा, अन्धकारसे बाहर खींचना होगा, अुसका नेता बनकर अुसके शत्रुसे युद्ध करना होगा।

और वह जाकर चौराहेपर खड़ा हो गया और सबको सुनाकर कहने लगा—" मैं मसीह हूँ, पैगम्बर हूँ। भगवानका प्रतिनिधि हूँ। मेरे पास तुम्हारे अुद्धारके लिये अेक संदेश है।"

लेकिन किसीने अुसकी बात नहीं सुनी। कुछ अुसकी ओर देखकर हँस पड़ते; कुछ कहते, पागल है; अधिकांश कहते, यह हमारे धर्मके विरुद्ध शिक्षा देता है, नास्तिक है, अिसे मारो! और बच्चे अुसे पत्थर मारा करते।

* * *

आखिर तंग आकर वह अेक अँधेरी गलीमें छिपकर बैठ गया और सोचने लगा। अुसने निश्चय किया कि मानव-जातिका सबसे बड़ा शत्रु है धर्म, अुसीसे लड़ना होगा।

तभी पास कहींसे अुसने स्त्रीके करुण क्रन्दनकी आवाज़ सुनी। अुसने देखा, अेक स्त्री भूमिपर लेटी है, अुसके पास अेक बहुत छोटा-सा बच्चा पड़ा है, जो या तो बेहोश है या मर चुका है, क्योंकि अुसके शरीरमें किसी प्रकारकी गति नहीं है।

ज्ञान ने पूछा—" बहन, क्यों रोती हो ? "

अुस स्त्रीने कहा—" मैंने अेक विधर्मीसे विवाह किया था। जब लोगोंको अिसका पता चला, तब अुन्होंने अुसे मार डाला और मुझे निकाल दिया। मेरा बँच्चा भी भूखसे मर रहा है।"

ज्ञानका निश्चय और दृढ़ हो गया। अुसने कहा— " तुम मेरे साथ आओ, मैं तुम्हारी रक्षा करूँगा।" और अुसे अपने साथ ले गया।

ज्ञानने धर्मके विरुद्ध प्रचार करना शुरू किया। अुसने कहा—"धर्म झूठा बन्धन है। परमात्मा अेक है, अबाध है और धर्मसे परे है। धर्म हमें सीमामें रखता है, रोकता है, परमात्मासे अलग रखता है; अतः हमारा शत्रु है।"

लेकिन किसीने कहा—" जो व्यक्ति परायी और बहिष्कृता औरतको अपने साथ रखता है, अुसकी बात क्यों सुनें ? वह समाजसे पतित है, नीच है।"

तब लोगोंने अुसे समाजच्युत करके बाहर निकाल दिया।

*   *   *

ज्ञानने देखा कि धर्मसे लड़नेके पहले समाजसे लड़ना है। जब तक समाजपर विजय नहीं मिलती, तब तक धर्मका खंडन नहीं हो सकता।

तब वह अिसी प्रकार प्रचार करने लगा—वह कहने लगा—"ये धर्मध्वजी, ये पुंगी पुरोहित, मुल्ला, ये कौन हैं? अिन्हें क्या अधिकार है, हमारे जीवनको बाँध रखनेका? आओ, हम अिन्हें दूर कर दें, अेक स्वतंत्र समाजकी रचना करें, ताकि हम अुन्नतिके पथपर बढ़ सकें।"

तब अेक दिन विदेशी सरकारके दो सिपाही आकर अुसे पकड़ ले गये, क्योंकि वह वर्गोंमें परस्पर विरोध जगा रहा था।

ज्ञान जब जेल काटकर बाहर निकला, तब अुसकी छातीमें अिन विदेशियोंके प्रति विद्रोह धधक रहा था। यही तो हमारी क्षुद्रताओंको स्थायी बनाये रखते हैं, और अुससे लाभ अुठाते हैं। पहले अपनेको विदेशी प्रभुत्वसे मुक्त करना होगा, तब......और वह गुप्त रूपसे विदेशियोंके विरुद्ध लड़ाअीका आयोजन करने लगा।

अेक दिन अुसके पास अेक विदेशी आदमी आया। वह मैले-कुचैले, फटे-फुटे पुराने खाकी कपड़े पहने हुअे था। मुखपर झुर्रियाँ पड़ी थीं, आँखोंमें अेक तीखा दर्द था।

अुसने ज्ञानसे कहा—"आप मुझे कुछ काम दें, ताकि मैं अपनी रोजी कमा सकूँ। मैं विदेशी हूँ। आपके देशमें भूखा मर रहा हूँ। कोई भी काम मुझे दें, मैं करूँगा। आप परीक्षा लें। मेरे पास रोटीका टुकड़ा भी नहीं है।"

ज्ञानने खिन्न होकर कहा—"मेरी दशा तुमसे कुछ अच्छी नहीं है, मैं भी भूखा हूँ।"

वह विदेशी अेकाअेक पिघल-सा गया। बोला—"मैं आपके दुःखसे बहुत दुखी हूँ। मुझे अपना भाअी समझें। यदि आपसमें सहानुभूति हो, तो भूखे मरना मामूली बात है। परमात्मा आपकी रक्षा करें। मैं आपके लिये कुछ कर सकता हूँ?"

* * *

ज्ञानने देखा कि देशी-विदेशीका प्रश्न तब अुठता है, जब पेट भरा हो। सबसे पहला शत्रु तो यह भूख ही है; पहले भूखको जीतना होगा, तभी आगे कुछ सोचा जा सकेगा....

और अुसने 'भूखके लड़ाकों'—का अेक दल बनाना शुरू किया, जिसका अुद्देश्य था अमीरोंसे धन छीनकर सबमें समान रूपसे वितरण करना, भूखोंको रोटी देना अित्यादि; लेकिन जब धनिकोंको अिस बातका पता चला तब अुन्होंने अेक दिन चुपचाप अपने चरों द्वारा अुसे पकड़वा मँगाया और अेक पहाड़ी किलेमें कैद कर दिया।

वहाँ अेकान्तमें वे अुसे सतानेके लिये नित्य अेक मुट्ठी चबेना और अेक लोटा पानी दे देते, बस।

धीरे धीरे ज्ञानका हृदय ग्लानिसे भरने लगा। जीवन अुसे बोझ सा जान पड़ने लगा। निरन्तर यह भाव अुसके भीतर जगा करता कि मैं, ज्ञान, परमात्माका प्रतिनिधि अितना विवश हूँ कि पेट-भर रोटीका प्रबन्ध मेरे लिये असम्भव है! यदि अैसा है, तो कितना व्यर्थ है यह जीवन, कितना झूठा, कितना बेअीमान!

अेक दिन वह किलेकी दीवारपर चढ़ गया। बाहर खाअीमें भरा हुआ पानी देखते देखते अुसे अेकदमसे विचार आया और अुसने निश्चय कर लिया कि वह अुसमें कूदकर प्राण खो देगा। परमात्माके पास लौटकर प्रार्थना करेगा कि मुझे अिस भारसे मुक्त करो; मैं तुम्हारा प्रतिनिधि तो हूं, लेकिन अैसे संसारमें मेरा स्थान नहीं है।

वह स्थिर-मुग्ध दृष्टिसे खाअीके, पानीमें देखने लगा। वह कूदनेको ही था कि अेकाअेक अुसने देखा, पानीमें अुसका प्रतिबिम्ब झलक रहा है और मानो कह रहा है—"बस, अपने आपसे लड़ चुके?"

ज्ञान सहमकर रुक गया; फिर धीरे धीरे दीवारपरसे नीचे अुतर आया और क़िलेमें चक्कर काटने लगा।

और अुसने जान लिया कि जीवनकी सबसे बड़ी कठिनाअी यही है कि हम निरन्तर आसानीकी ओर आकृष्ट होते है।

देवसेना

१

रामनाथय्यर और अुनकी पत्नी सीतालक्ष्मी चाअिना बाज़ार गये और कुछ चीज़ें ख़रीदनेके बाद, पासके होटल में जलपान कर, अपनी मोटरमे आ बैठे ।

"समुद्रके किनारे चले ?" रामनाथय्यरने पूछा ।

"बीच (समुद्र किनारा) पर ? किसी अैसी जगहमें गाड़ी रोकनेको कहिये जहाँ लोगोकी भीड़ न हो। भीड़ भड़क्केमें जाना मुझे पसन्द नहीं। वहाँ देखिये, खिलौने बिक रहे हैं। दो-चार ख़रीद लीजिये, बच्चों के लिये ले जायँगे।"

सीतालक्ष्मीका अितना कहना था कि खिलौनेवाला गाड़ीके पास आ गया। वह किसी तरह सीतालक्ष्मीके मनकी बात ताड़ गया। पति-पत्नी गाड़ीमें बैठे बैठे खिलौने चुन रहे थे और भाव पटा रहे थे। गाड़ीके दूसरे दरवाज़ेके पास अेक युवती भिखारिन अेक नन्हे बच्चेको गोदमें ले सबको दिखाकर कह रही थी—"महाराज, धरम कीजिये। नन्हा बालक है, मा !"

रामनाथय्यरने पूछा—"सभी जपानी खिलौनै हैं न ?"

व्यापारीने कहा—" जापानी ही हैं, और क्या ? हमारे यहाँ अैसे खिलौने बनते कहाँ हैं ? "

भिखारिनने फिर गिड़गिड़ाकर प्रार्थना की।

सीतालक्ष्मीने कहा—" सौदा करते वक्त यह क्या बला है ? अिस शहरमें भिखारियोंका अुपद्रव बहुत ज्यादा हो गया है।"

" भूख लगती है, भाअी; आँख अुठाकर देखो, मा ! भगवान तुम्हारा भला करे ! " भिखारिनने कहा।

सीतालक्ष्मीने डाँटा—" जाओगी कि पुलिसको पुकारूँ ? "

" दूधके बिना बच्चा तड़प रहा है, मा ! अेक आना भीख दो, भाअी ! कितने ही तो खर्च हो रहे हैं, महारानी ! "

रामनाथय्यर भाव ठहराकर मोल ली हुअी चीज़ोंको रखते हुअे बोले—"चलो, बीच चलें।"

ड्राअिवरने भिखारिनको हट जानेका संकेत किया और गाड़ी चली।

"महाराज, महाराज" कहती हुअी भिखारिन कुछ दूर तक गाड़ीको पकड़े हुअे दौड़ी आ रही थी।

" दौड़ो मत—मर जाओगी। " रामनाथय्यरने कहा। भिखारिनका मुँह अुनको कहीं देखा हुआ-सा जान पड़ा। गाड़ी तेज़ीसे चलने लगी, तो उन्होंने कहा—"लड़की बेचारी छोटी है। शक्ल देखनेसे तो अपने गाँवकी मालूम होती है।"

" किसी भी गाँवकी हो; होगी कोअी चुड़ैल ! अुससे हमें क्या करना है? दीजिये, देखूँ तो वह नया खिलौना क्या है, अेरोप्लेन ? चावी देनेका है या मामूली खिलौना है ? "

खिलौनोंको अेक अेक करके देखते हुअे वे समुद्र-तीर पहुँचे ।

२

सेलममें पेरियण्णमुदलि गलीमें गरीब जुलाहोंका अेक कुटुम्ब था । वैयापुरिकी अुम्र तीसकी थी। अुसकी बहन देव-सेना बीसकी थी; अुसका ब्याह नहीं हुआ था। अुनकी माका नाम था पळनियम्माळ । तीनों अपने पुराने परम्परागत जुलाहेके धन्धेसे कष्टमय जीवन व्यतीत करते थे। दिन-भरकी मेहनत करके तीनो मिलकर अेक हफ्तेमें चार रुपये कमाते थे ।

कअी सालसे करघेका व्यवसाय ठंडा होता गया । मज़दूरी घटने लगी । बादमें कम मज़दूरीके भी न मिलनेसे लोगोंकी हालत ख़राब थी । सेलममें कअी मेखोंके साथ साथ वैयापुरिकी मेख भी बेकार पड़ी थी । देवसेना दो ब्राह्मण अफ़सरोंके यहाँ घरकी सफाअी और काम-काज कर देती थी, जिससे अुसको मासिक तीन रुपये मिल जाते थे । पळनियम्माळ भी अेक घरमें लीप-पोतकर अेक रुपया कमा लेती थी । वैयापुरि करघोंके मालिकोंके पास नौकरीके लिये भटकता फिरा । जब कहीं नौकरी नहीं मिली, तो वह अपनी

मासे विदाअी लेकर बंगलोर चला गया। किसी मिलमें नौकरी पानेकी अुम्मीदसे कअी मुदलि लोग भी अुसके साथ हो लिये।

वैयापुरिका पत्र आया कि कअी दिनकी कोशिशसे मिलमें नौकरी लग गयी है। वैयापुरि कुछ लिखना-पढ़ना जानता था। बचपनमें अुसके पिताने अुसे मुहल्लेके म्युनिसिपल स्कूलमें शामिल कराया था। अुन दिनों जुलाहोंका जीवन अितना कष्टमय नहीं था।

पड़ोसी मारियप्प मुदलिके लड़केने वैयापुरिके पत्रको पढ़ सुनाया—“गली गली छाननेपर, कितनोंकी मुट्ठी गरम कर, अेक मिलमें नौकरी मिली है। रोज़ आठ आने मज़दूरी मिलती है। महीनेमें छब्बीस दिन काम करना पड़ता है, अिसलिये तेरह रुपये मिलेंगे। अिस महीनेकी तनख्वाह खाने-पीनेमें और क़र्ज चुकानेमें लग जायगी। अगले महीनेसे तुमलोगोंको दो रुपये महिने भेज सकूँगा, आगे अीश्वर है।”

बुढ़िया और देवसेनाके आनन्दकी सीमा न रही।

दस दिन बाद, अेक और ख़त मिला—“माताको साष्टांग नमस्कार। यहाँ अीश्वरकी कृपासे सब कुशल है। आशा है, देवसेना और तुम कुशल-पूर्वक होगी। यहाँ मिलका काम मुझे अच्छा नहीं लगता। अुन दिनोंकी याद करके, जब मैं अपने करघेपर बैठा काम करता था; मै आँसू पीकर रह जाता हूँ। यहाँ मैं पागल-सा हो रहा हूँ।

सिरमें चक्कर आता है। मैं अपने दुःखों और झंझटोंका वर्णन नहीं कर सकता। न जाने क्यों मैं गाँव छोड़कर अिधर चला आया! पड़ोसके घरवाले लड़केके द्वारा, अगर हो सके तो, चिट्ठी लिखना। मेरा पता है—सेलम वैयापुरि मुदलि, मल्लेश्वरम् कुली लाअिन।

३

देवसेना जिन दो घरोंमें काम-काज करती थी, अुनमेंसे अेक, अेक पेन्शनरका घर था। अुनकी स्त्री अच्छे स्वभावकी थी। वह काम लेनेमें सख्त थी; पर अन्य बातोंमें प्रेमका बर्ताव रखती थी। अुसने देवसेनाको अपनी अेक पुरानी साड़ी दी। रसोअीमें बची हुअी चीज़ें भी—भात और कढ़ी, पापड़ और खीर—अुसे ही मिलतीं। अिस तरह कितने ही दिन बीत गये।

शायद भगवानको देवसेनाका शान्तिमय जीवन मंजूर न था। अुस घरका रसोअिया—देवसेनाको बचे हुअे भोजनादि देनेवाला—अुसके साथ रसीली बातें करता। अेक दिन अुसने अुसकी अिच्छाके विरुद्ध अुसके साथ छेड़छाड़ की।

देवसेनाकी आँखोंमें खून अुतर आया; लेकिन मारे लज्जाके अुसने यह बात किसीसे नहीं कही। अुस धूर्तने लालच दिया था—किसीसे कहना मत; तुझे मासिक दो रुपये दूँगा।

देवसेना आँसू पीकर रह गयी। अुसने घर जाकर अपनी मासे कहा—"मैं अुस नीमके पेड़वाले घरमें काम नहीं करूँगी, मा!"

जब माने अुसका कारण पूछा, तब देवसेनाने बड़े दुःखके साथ सारी हक़ीकत कह सुनायी। बुढ़ियाने कहा—"मै सारी बाते घरकी मालकिनसे कहूँगी।"

देवसेना बोली—"नहीं मा, अुनसे कहनेसे फायदा ही क्या है? मैं फिर वहाँ कामपर नहीं जाअूँगी।"

और जगह नौकरीकी तलाश की गयी; पर हर अेक घरमें कोअी-न-कोअी नौकरानी कामपर थी ही। दो महीने अिधर-अुधर भटकनेपर अेक घरमें नौकरी मिल गयी।

*   *   *

छह महीने गुजर गये। बंगलोरके अुस मिलमें, जहाँ वैयापुरि काम करता था, हड़ताल मनायी गयी। साहबने किसी मिस्त्रीपर हाथ चला दिया था। अुसके बाद वह मिस्त्री और कुछ कुली कामसे निकाले गये। अिस कारण मजदूर-यूनीयनकी बैठक हुअी, जिसमें यह प्रस्ताव पास हो गया कि अुस महीनेके वेतनके मिलते ही हड़ताल शुरू की जाय। वैयापुरिको भी अिसमें शामिल होना पडा।

अेक महीने तक हड़ताल चालू रही। मजदूरोंकी सभाअें हुअी और बड़ी हलचल मची। आरम्भमें अुद्वेग कुछ अधिक था; पर ज्यों ज्यों पैसेकी कमी होती गयी त्यों त्यों

अुनका जोश भी ठंडा पड़ता गया। चन्द सरकारी अफ़सरोंने अन्तमें सुलह करायी। सब लोग फिर मिलमें काम करने लगे। अेक हफ्तेके बाद 'गेट' पर नोटिस लगायी गयी कि 'पचीस कामगार कामसे हटा दिये गये हैं, और वे मिलमें प्रवेश न करें।' वैयापुरि भी अिन पचीसोंमेंसे अेक था।

वैयापुरिने अपने मिस्त्रीसे कहा--"अरे, मैंने क्या पाप किया था? मैं तो नया आया था और किसीमें शामिल भी नहीं हुआ।"

मिस्त्रीने जवाब दिया--"बड़े साहबका हुक्म है। यह सब अुस हत्यारे 'टाअिम-कीपर' रंगस्वामी नायकनकी करतूत है। और नामोंके साथ तुम्हारे नामको भी सूचीमें मिलाकर अुसने साहबके पास दे दिया है। अिसमें मैं कुछ नहीं कर सकता।"

रंगस्वामी नायकनके पास बड़ी नम्रताके साथ अपील की गयी। अुसने कहा--"मैं कुछ नहीं जानता। यह सब वेतन-बँटवारा करनेवाले गुमाश्ता अय्यरका काम है।"

हर किसीके पास बार बार जाकर अनुनय-विनय करनेपर भी कुछ नहीं हुआ। मैनेजरने कहा—"तुम लिखना-पढ़ना जानते हो, और लोगोंको तुमने भड़काया है; अिसलिये हम तुमको कामपर नहीं ले सकते।"

कअी दिन घूम-घामकर, हाथके सब खतम कर, बहुत तकलीफ़के साथ वैयापुरि मदरास आ पहुँचा। अुसके साथ

ही और दस कामगार, जो अुस मिलसे निकाले गये थे, नौकरीकी खोजमें मदरास आये। अुन्होंने अपने सब पैसोंको आपसमें बाँटकर भोजनका खर्च निकाला और आठ दिन तक अिधर-अुधर भटकते फिरे।

वैयापुरिको अेक मिलमें नौकरी मिली। 'गेट-कीपर' और छोटे-मोटे अफ़सरोंको चाँदीके जूते मारनेमें पाँच रुपये लग गये। वैयापुरिने अपने सोनेके कुण्डल बन्धक रखकर थोड़े रुपये क़र्ज लिये और अुसीसे भोजन-खर्च, मित्रोंका कर्ज वग़ैरेह चुका दिये। कुछ दिनोंके बाद वैयापुरि अपना कष्ट भूलनेके लिये शराब पीने लगा। सेलममें अुसकी यह आदत नहीं थी। फिर कुछ यारोंने अुसे जुअेका भी रास्ता दिखा दिया और अुसे मालामाल हो जानेकी तरकीब बतायी। अुसकी मजदूरीमेंसे भोजन-व्यय, झोंपड़ीका किराया आदि ज़रूरी खर्चके बाद जो रक़म बचती, वह गाँवको भेजे जानेके बदले अिन्हीं मदोंमें ख़र्च की जाने लगी। पठानका ऋण भी बढ़ता ही गया। अिन तकलीफ़ोंसे तंग आकर वह और भी ज्यादा पीने लगा।

पहले तो वह अिधर-अुधरकी बातें करके अपने कुटुम्बियों को टाल देता था। अब अुसने लिखा—खर्चके लिये मैं कुछ नहीं भेज सकता। अगर चाहे तो देवसेना यहाँ आकर किसी मिलमें काम कर सकती है।

यह पत्र पढ़कर देवसेना और पळनियम्माळका जी धक-से हो गया। कुछ रोज़ सब्र करनेपर अेक दिन देवसेनाने

कहा—"क्यों मा, मैं मदरास ही क्यों न चली जाऊँ ? वैयापुरिके साथ काम करके मैं भी दो-चार पैसे कमा लूँगी और तुमको भेजा करूँगी। सुना है, मदरासमें मुझ-जैसी कितनी ही लड़कियाँ मिलमें काम करती हैं।"

पहले तो माताने बड़ी आना-कानी की और कहा—यह भी कहीं हो सकता है ? तुझ-जैसी अनजान लड़कियाँ अुतनी दूर कैसे जायँ ? कुछ दिन वाद-विवाद करनेके बाद वृद्धा भी सहमत हुअी। देवसेनाने अपने कनफूल गिरो रखकर पड़ोसी माण्यिपनके पाससे बारह रुपये कर्ज़ लिये, और मदरासके लिये रवाना हुअी।

४

मदरासमें वैयापुरिने देवसेनाको अेक मिलमें सूत कातनेके विभागमें लगा दिया। वैयापुरिका मिल अलग था और यह अलग। अुस मिलमें देवसेना-जैसी करीब डेढ सौ लड़कियाँ, छोटी और बड़ी, काम करती थीं। देवसेना और अुसके साथकी दस लड़कियोंका संचालन करनेवाला अेक मेट था। यह पहले तो देवसेनासे बहुत प्यारके साथ पेश आता था। फिर काम करते वक्त डाँट-डपट करने लगा। जब कभी अेकान्तमें मिलता, तो बिना कारण ही अुसके साथ बड़ी रसीली बातें करता।

देवसेनाने अपनी अेक साथिनसे प्रश्न किया—"यह क्या बात है ? ये क्यों अिस तरहका बर्ताव करते हैं ?"

साथिनने मुसकराते हुअे कहा—"तुम तो जैसे कुछ जानती ही नहीं ! बेचारी, गँवार हो ! अगर अुनके कहे मुताबिक न चलो, तो वे तुमपर मज़दूरीकी आधीसे भी ज्यादा रकमका जुरमाना लगा दें। अगर वे खुश हो जायँ, तो जो भी सुभीता तुम चाहो, कर दें।"

गरीबोंकी तकलीफ़को पूछता कौन है ? तिसपर गरीब लड़कियोंका जन्म लेकर जो मिलोंमें काम करती हैं, अुन्हें तो पूर्व-जन्मकी पापिन ही कहना चाहिये।

देवसेनाने कुछ दिनों तक सब बातोंको सहन किया। फिर अपने-आपको अक्षम समझकर अुसने मिस्त्रीके व्यवहारका प्रतिवाद करना छोड़ दिया। दिल थामकर वह अुसके साथ हँसी-खुशीसे बोलने-चालने लगी। दिन-पर-दिन अुसमें वह आनन्दका अनुभव करने लगी। अुसकी मज़दूरी भी बढ़ गयी।

कअी महीने बीत गये। देवसेनाको शरीरमें बाधाअें दिखाअी दीं। अुसे मालूम हुआ कि अुसके पाँव भारी हो गये हैं। सारे देवताओंकी अुसने मनौतियाँ मान लीं। जंगलमें शिकारीसे बचनेके लिये भागनेवाली हिरनीकी भाँति वह चकित और किंकर्तव्यविमूढ हो गयी। वैयापुरिसे अपनी बात कहनेमें अुसे डर लगा। अुसकी हालतको देख कुछ साथिनें अुसकी हँसी-दिल्लगी करने लगीं। अुसने गाँव जानेका विचार किया; लेकिन अुसे यह भय हुआ कि गाँववाले अुसे बिरादरीसे निकाल देंगे। अुसकी माँ अिस

बातको कैसे सहन करेगी, यह सोचते ही अुसने गाँव जानेका अिरादा छोड दिया। भगवानपर भरोसा रखकर अुसी हालतमें वह मिलमें काम करती जाती थी।

अेक दिन अचानक अुसका मन सिहर अुठा। वह खूब रोथी—"हाय, मैं क्या करूँ? मैंने अपने कुलको कलंकका टीका लगाया है!"

अुसकी साथिन बोली—"घबराओ मत देवसेना, यह तो अेक अैसी घटना है, जो सबपर बीतती है। अिसके लिये दवा है। तुरन्त आराम हो जायगा।"

"हाँ, मैंने भी सुना है; पर मुझे डर लग रहा है। कहीं मर तो न जाअूँगी? हाय रे भगवान! मुझे छिपनेके लिये कहीं ठौर बताओ।"

"दो रुपये दो तो "मुत्तुस्वामी आचारी गली" में अेक बाअी रहती है, वह सब कुछ कर देगी"

"अगर पुलिसको ख़बर मिल गयी, तो वे पकड़ न लेंगे?" देवसेनाने पूछा।

"अरी, अुसके लिये डर मत। अुस बाअीका पुलिस-वालोंके साथ मेल-जोल है। तुम तो जानती हो, रुपयोंसे कोअी भी काम बन सकता है।"

"हाय! मैं रुपयेके लिये कहाँ जाअूँ? हा भगवान! तुम तो, मालूम पड़ता है, मुझे भूल गये हो। मैं अिस गन्दी जगहमें आयी क्यों? अच्छा होता, मैं सेलममें ही भूख-

प्यासमे तड़प-तड़पकर मर जाती ! ”

*　　*　　*

कुछ दिनोंके बाद किसी दूसरी साथिनने अेक अुपाय बता दिया—“ शिशुकी हत्या नहीं करनी चाहिये, दैया ! कहते हैं, वह तीन जन्म तक न मिटनेवाला पाप है। गणेश-मन्दिरकी गलीमें अेक बुढ़िया रहती है; अच्छे स्वभावकी है। अुसके पास चली जाओ, तो सब काम वह कर लेगी। तुम्हारे-जैसी कितनी ही स्त्रियां अुसके घरमें जच्चा हुअी हैं। तुम मत घबराओ। ”

देवसेनाने दुआ माँगी—“ भगवान तुम्हारा भला करे, बहन ! ”

अनन्तर देवसेना गणेश मन्दिरकी गलीमें रहनेवाली परोपकारिणी बाअीके पास गयी। यथासमय प्रसव हुआ। बच्चेको छूते ही देवसेनाकी दुनिया कुछ निराली ही हो गयी। वह सब कष्टोंको भूल गयी। बच्चा ही अब अुसका सारा संसार था।

वह बच्चेको दूध पिलाती हुअी कहती—“ यह अीश्वर की देन है। अिस बेचारेने क्या किया है ? मैं ही कुल-कलंकिनी हूँ। ” अिस तरह कुछ दिनों तक वह अपनी चिन्ताओंको भूल-सी गयी।

गणेश मन्दिरकी गलीवाली परोपकारिणी बाअी बड़े रहमके साथ कहती—“ देवसेना, तुम अब कामपर नहीं जा सकती हो। और कुछ दिन यहाँ ठहर जाओ। ”

‘दुनियामें अैसे अच्छे लोगोंके रहते मैंने भगवानकी निन्दा की।’ यह सोचकर देवसेनाने परमेश्वरकी वन्दना की।

अेक महीनेके बाद भेद खुला। वह बुढ़िया मानव-वंचित ललनाओंको अपने पास रखकर अुनसे जीविका चलानेवाली थी। देवसेना अुसके जालमें फँस गयी। वह फिर कभी मिलमें काम करने नहीं गयी।

५

“सेलममें अपने घरमें काम करनेवाली देवसेनाको तुम नहीं जानती हो? बस, अुसीके जैसी थी वह भिखारिन।” रामनाथय्यरने कहा।

रामनाथय्यर अुन्हीं पेन्शनरके ज्येष्ठ पुत्र थे, जिनके घरमें देवसेना पहले-पहल काममें लगी थी। वे मदरासमें अेक बड़े बैंकके खजांची थे।

सीतालक्ष्मी बोली—“सेलमवाली लड़की यहाँ क्यों आने लगी? यह आपका भ्रम है।”

“न जाने वह कौन है। कोअी भी हो; बच्चेको गोदमें लिये अिस तरह स्त्रियाँ भीख माँगने लगी हैं; देशकी कैसी दुर्दशा हो रही है!”

“बस, आपको तो हमेशा देशका ही ध्यान लगा हुआ है। पहले अपने कुटुम्बको तो सँभालिये।” अुनकी स्त्रीने कहा।

दूसरे दिन शामको भी रामनाथय्यरके स्मृति-पटसे अुस भिखारिनका रूप दूर नहीं हुआ। वे दफ्तरसे सीधे चाअिना

बाज़ार गये। फिर अेक बार अुससे मिलकर दो दो बातें कर लेनेकी अुनकी अिच्छा थी। अिसलिये वे होटलके पास ही गाड़ी रोककर कुछ देर तक अुसकी प्रतीक्षा करते रहे। कअी भिखारियोंने 'महाराज, महाराज' कहकर अुन्हें घेर लिया; पर वह वहाँ नहीं थी।

दूसरे शनिवारकी शामको रामनाथय्यर और अुनकी पत्नी दोनों फिर चाअिना-बाजारकी तरफ़ चले।

"वह देखिये, आपकी भिखारिन!" सीतालक्ष्मीने कहा।

बच्चेको गोदमें लिये और 'माँ, अेक आना दो। अिस बच्चेकी ओर आँख अुठाओ, मैया!' कहती हुअी वह भिखारिन, कुछ दूरपर खड़ी दूसरी मोटरकी ओर जल्दीसे दौड़ी।

रामनाथय्यरकी गाडीको देखते ही भिखारिन जान गयी कि अुस गाडीमें बैठे हुअे लोग कुछ न देंगे, और अिसीलिये वह दूसरी गाड़ीके पास चली गयी। भिखारियोंको यह ज्ञान अनुभवसे होता है। हर अेक बातमें अक्लमंदी और चतुराअी होती है न? दूरपर खड़ी हुअी भिखारिनको पास बुलानेमें रामनाथय्यरको शरम मालूम हुअी। वे कुछ देर तक चुपचाप खड़े रहे। अुन्होंने सोचा कि वहाँका काम पूरा हो जानेपर वह अुनके पास आयगी;-लेकिन वह भीड़में गायब हो गयी और फिर कभी न दीख पड़ी।

"अच्छा, चलिये अब घर।" सीतालक्ष्मीने कहा।

आठ दिनके अुपरान्त रामनाथय्यर और सीतालक्ष्मी सिनेमा देखने गये। खेल था 'नलोपाख्यान'। 'गेट' पर बड़ी भीड़ थी। नयी स्टार टी. के. धनभाग्यम् दमयन्तीका पार्ट अदा करनेवाली थी।

लोगोंने कहा—"दूसरे 'शो' में ही जा सकते हैं। अिस 'शो' के लिये टिकट बिक चुके हैं।"

रामनाथय्यरने पूछा—"फिर घर जाकर लौटें तो ?"

सीतालक्ष्मीके जवाब देनेके पहले ही अेक भिखारिन मोटरके दरवाजेके पास आकर बोली—"भैया, भीख दो।"

रामनाथय्यरने मुड़कर देखा कि वह सेलमवाली तो नहीं है। वे अुसीके ध्यानमें लीन थे। यह वह नहीं, दूसरी थी।

"यहाँ गाड़ीको रोकनेसे भिखमंगोंका उपद्रव है। जल्दी घर चलो, रामन नायर!" सीतालक्ष्मीने ड्राअिवरको आज्ञा दी।

अुसी समय अेक पुलिसके सिपाहीने अुस भिखारिनको मार भगाया।

अुसी रातको रामनाथय्यरने स्वप्नमें अुस भिखारिनको देखा। अुन्होंने जिज्ञासा प्रकट की—"तुम देवसेना तो नहीं हो ? तुम्हारा गाँव कौन-सा है ?"

आनन्दसे प्रफुल्लित आँखवाली भिखारिन बोली—"मालिक, ओ मालिक, आप सेलमके रहनेवाले हैं न ? नीमवाले घरके ही हैं न ?" अुन्होंने ड्राअिवरसे कहा—"नायर, अिसको गाड़ीमें चढ़ा लो।"

घर जाते ही अुनकी पत्नीने पूछा—"यह कौन है ? अिस चुड़ैलको क्यों घर लाये ?"

"अिसको अपने घरमें खिलाकर क्यों नहीं रख सकते ? भोजन देकर चार रुपयेका वेतन भी लगा देंगे।"

"अच्छा विचार किया आपने ! दुनिया-भरके निकम्मोंको अपने घरमें आश्रय देंगे ! वाह ! कैसा बुद्धिमानीका काम किया है ! चलो, हटो बाहर !"

भिखारिनने कहा—"मा, मैं चोरी नहीं करूंगी। तुम जो काम करनेको कहो, सो करूँगी।"

सीतालक्ष्मीने कह दिया—"कुछ नहीं हो सकता; चलो बाहर।"

भिखारिनको अेक रुपया देनेके लिये रामनाथय्यर जेबको टटोलने लगे; पर थैली जेबमें नहीं थी। अिधर-अुधर खोजते खोजते थक गये। भिखारिनका बच्चा ज़ोरसे रोने लगा—वे जाग उठे—स्वप्न था ! अुनकी बच्ची राधा बिस्तरपर बैठी रो रही थी।

'खैर, सीतालक्ष्मी अितनी निष्ठुर नहीं हो सकती; स्वप्न ही तो है !'—यह सोचकर रामनाथय्यर प्रसन्न हुअे।

अुसके बाद कअी दिनों तक रामनाथय्यरने बाजार-हाट स्टेशन-सिनेमा—सब जगहोंमें अुसकी खोज की; पर वह भिखारिन अुनको मिली ही नहीं। कौन जाने, वह क्या हुई ?

ठाकुरका कुआँ

जोखूने लोटा मुँहमें लगाया तो पानीसे सख्त बदबू आयी। गंगीसे बोला—"यह कैसा पानी है? मारे बासके पिया नहीं जाता। गला सूखा जा रहा है और तू सड़ा हुआ पानी पिलाये देती है।"

गंगी प्रतिदिन शामको पानी भर लिया करती थी। कुआँ दूर था; बार बार जाना मुश्किल था। कल वह पानी लायी तो अुसमें बू बिलकुल न थी; आज पानीमें बदबू कैसी? लोटा नाकसे लगाया, तो सचमुच बदबू थी। ज़रूर कोअी जानवर कुअेंमें गिरकर मर गया होगा; मगर दूसरा पानी आये कहाँसे?

ठाकुरके कुअेंपर कौन चढ़ने देगा? दूर ही से लोग डाँट बतायेंगे। साहूका कुआँ गाँवके अुस सिरेपर है; परन्तु वहाँ भी कौन पानी भरने देगा? चौथा कुआँ गाँवमें है नहीं।

जोखू कअी दिनसे बीमार है। कुछ देर तक तो प्यास रोके चुप पड़ा रहा, फिर बोला—"अब तो मारे प्यासके रहा नहीं जाता। ला, थोड़ा पानी नाक बन्द करके पी लूँ।"

गंगीने पानी न दिया। खराब पानी पीनेसे बीमारी बढ़ जायगी, अितना जानती थी; परन्तु यह न जानती थी कि पानीको अुबाल देनेसे अुसकी खराबी जाती रहती है। बोली—"यह पानी कैसे पिओगे? न जाने कौन जानवर मरा है। कुअेंसे मैं दूसरा पानी लाये देती हूँ।"

जोखूने आश्चर्यसे अुसकी ओर देखा—"दूसरा पानी कहाँसे लायेगी?"

"ठाकुर और साहूके दो कुअें तो हैं। क्या अेक लोटा पानी न भरने देंगे?"

"हाथ-पाँव तुड़वा आयेगी और कुछ न होगा, बैठ चुपकेसे। ब्राह्मण देवता आशीर्वाद देंगे, ठाकुर लाठी मारेंगे, साहूजी अेकके पाँच लेंगे। गरीबोंका दर्द कौन समझता है? हम तो मर भी जाते हैं, तो कोअी दुआरपर झाँकने नहीं आता, कंधा देना तो बड़ी बात है। अैसे लोग कुअेंसे पानी भरने देंगे?"

अिन शब्दोंमें कड़वा सत्य था। गंगी क्या जवाब देती; किन्तु अुसने वह बदबूदार पानी पीनेको न दिया।

२

रातके नौ बजे थे। थके-माँदे मज़दूर तो सो चुके थे। ठाकुरके दरवाज़ेपर दस-पाँच बे-फ़िक्रे जमा थे। मैदानी

बहादुरीका तो अब न ज़माना रहा है, न मौका; क़ानूनी बहादुरीकी बातें हो रही थीं। कितनी होशियारीसे ठाकुरने थानेदारको अेक खास मुकद्दमेमें रिश्वत दे दी और साफ निकल गये। कितनी अक्लमन्दीसे अेक मार्केके मुक़द्दमेकी नक़ल ले आये। नाज़िर और मोहतमिम, सभी कहते थे, नक़ल नहीं मिल सकती। कोअी पचास माँगता, कोअी सौ। यहाँ बे-पैसे-कौड़ी नकल अुड़ा दी। काम करनेका ढंग चाहिये।

अिसी समय गंगी कुअेंसे पानी लेने पहुँची।

कुप्पीकी धुँधली रोशनी कुअेंपर आ रही थी। गंगी जगतकी आडमें बैठी मौक़ेका अिन्तज़ार करने लगी। अिस कुअेंका पानी सारा गाँव पीता है। किसीके लिये रोक नहीं; सिर्फ ये बदनसीब नहीं भर सकते।

गंगीका विद्रोही दिल रिवाजी पाबंदियों और मजबूरियों पर चोटें करने लगा—हम क्यों नीच हैं, और ये लोग क्यों अूँच हैं? अिसलिये कि ये लोग गलेमें तागा डाल लेते हैं? यहाँ तो जितने है अेकसे-अेक छँटे हैं। चोरी ये करें, जाल-फ़रेब ये करें, झूठे मुक़द्दमे ये करें। अभी अिसी ठाकुरने तो अुस दिन बेचारे गडरियेकी अेक भेड़ चुरा ली थी और बादको मारकर खा गया। अिन्हीं पंडितजीके घर तो बारहों मास जुआ होता है। यही साहूजी तो घीमें तेल मिलाकर बेचते हैं। काम करा लेते है, मजदूरी देते नानी मरती है।

किस बातमें हैं हमसे अूँचे ? हाँ, मुँहमें हमसे अूँचे हैं। हम गली गली चिल्लाते नहीं कि हम अूँचे हैं, हम अूँचे। कभी गाँवमें आ जाती हूँ, तो रस-भरी आँखोंसे देखने लगते है, जैसे सबकी छातीपर साँप लोटने लगता है, परन्तु घमंड यह कि हम अूँचे हैं!

कुअेंपर किसीके आनेकी आहट हुअी। गंगीकी छाती धक् धक् करने लगी। कहीं देख लें तो ग़जब हो जाय! अेक लात भी तो नीचे न पड़े। अुसने घड़ा और रस्सी अुठा ली और झुककर चलती हुअी अेक वृक्षके अँधेरे सायेमें जा खड़ी हुअी। कब अिन लोगोंको दया आती है किसीपर? बेचारे महँगूको अितना मारा कि महीनों लहू थूकता रहा। अिसीलिये तो कि अुसने बेगार न दी थी? अुसपर ये लोग अूँचे बनते हैं!

कुअेंपर दो स्त्रियाँ पानी भरने आयी थीं। अिनमें बातें हो रही थीं—"खाना खाने चले और हुक्म हुआ कि ताज़ा पानी भर लाओ। घड़ेके लिये पैसे नहीं है।"

"हमलोगोंको आरामसे बैठे देखकर जैसे मरदोंको जलन होती है।"

"हाँ, यह तो न हुआ कि कलसिया अुठाकर भर लाते। बस, हुक्म चला दिया कि ताज़ा पानी लाओ, जैसे हम लौंड़ियाँ ही तो हैं।"

"लौंडियाँ नहीं तो और क्या हो तुम? रोटी-कपड़ा

नहीं पातीं ? दस-पाँच रुपये भी छीन-झपटकर ले ही लेती हो। और लौंडियाँ कैसी होती हैं ?"

"मत जलाओ, दीदी ! दिन-भर आराम करनेको जी तरसकर रह जाता है अितना काम तो किसी दूसरेके घर कर देतीं, तो अिससे कहीं आरामसे रहती। अूपरसे यह अेहसान मानना। यहाँ काम करते करते मर जाओ ; पर किसीका मुँह ही नहीं सीधा होता।"

दोनों पानी भरकर चली गयीं, तो गंगी वृक्षकी छायासे निकली और कुअेंके जगतके पास आयी। बे-फ़िक्रे चले गये थे। ठाकुर भी दरवाजा बंद कर आँगनमें सोने जा रहे थे। गंगीने क्षणिक सुखका साँस लिया। किसी तरह मैदान तो साफ़ हुआ। अमृत चुरा लानेके लिये जो राजकुमार किसी ज़मानेमें गया था, वह भी शायद अितनी सावधानता के साथ और समझ-बूझकर न गया होगा। गंगी दबे पाँव कुअेंके जगतपर चढ़ी। विजयका अैसा अनुभव अुसे पहले कभी न हुआ था।

अुसने रस्सीका फन्दा घड़ेमें डाला। दायें-बायें चौकन्नी दृष्टिसे देखा, जैसे कोअी सिपाही रातको शत्रुके किलेमें सूराख कर रहा हो। अगर अिस समय वह पकड़ भी गयी, तो फिर अुसके लिये माफ़ी या रियायतकी रत्ती-भर अुम्मीद नहीं। अन्तमें देवताओंको याद करके अुसने कलेजा किया और घड़ा कुअेंमें डाल दिया।

घड़ेने पानीमें गोता लगाया, बहुत ही आहिस्ता। जरा भी आवाज़ न हुअी। गंगीने दो-चार हाथ जल्दी जल्दी मारे। घड़ा कुअेंके मुंह तक आ पहुँचा। कोअी बड़ा शहज़ोर पहलवान भी अितनी तेजीसे अुसे न खींच सकता था।

गंगी झुकी कि घडेको पकड़कर जगतपर रक्खे कि अेकाअेक ठाकुर साहबका दरवाज़ा खुल गया। शेरका भी मुँह अिससे अधिक भयानक न होगा!

गंगीके हाथसे रस्सी छूट गयी। साथ घड़ा पानीमें धड़ाम-से गिरा और कअी क्षणं तक पानीमें हलकोरेकी आवाज़ सुनायी देती रही।

ठाकुर 'कौन है? कौन है?' पुकारते हुअे कुअेंकी तरफ़ जा रहे थे और गंगी जगतसे कूदकर भागी जा रही थी।

घर पहुँचकर देखा कि जोखू लोटा मुँहसे लगाये वही मैला—गंदा पानी पी रहा है!

ताअी

"ताअूजी, हमें लेलगाली (रेलगाड़ी) ला दोगे?" कहता हुआ अेक पंचवर्षीय बालक बाबू रामजीदासकी ओर दौड़ा।

बाबू साहबने दोनों बाँहें फैलाकर कहा—"हाँ बेटा, ला देंगे।"

अुनके अितना कहते कहते बालक अुनके निकट आ गया। अुन्होंने बालकको गोदमें अुठा लिया, और अुसका मुख चूमकर वे बोले—"क्या करेगा रेलगाड़ी?"

"बालक बोला—"अुसमें बैठकर बड़ी दूर जायँगे,। हम भी जायँगे, चुन्नीको भी ले जायँगे। बाबूजीको नहीं ले जायँगे। हमें लेलगाली नहीं ला देते। ताअूजी, तुम ला दोगे, तो तुम्हें ले जायँगे।"

बाबू०—"और किसे ले जायगा?"

बालक दम-भर सोचकर बोला—"बछ, और किसीको नहीं ले जायँगे।"

पास ही बाबू रामजीदासकी अर्धांगिनी बैठी थीं। बाबू साहबने अुनकी ओर अिशारा करके कहा—"और अपनी ताअीको नहीं ले जायगा?"

बालक कुछ देर तक अपनी ताअीकी ओर देखता रहा। ताअीजी अुस समय कुछ चिढ़ी हुअी-सी बैठी थीं। बालकको अुनके मुखका यह भाव अच्छा न लगा। अतअेव वह बोला—" ताअीको नहीं ले जायँगे। "

ताअीजी सुपारी काटती हुअी बोलीं—"अपने ताअूजी-को ही ले जा। मेरे अूपर दया रख! "

ताअीने यह बात बड़ी रुखाअीके साथ कही। बालक ताअीके शुष्क व्यवहारको तुरन्त ताड़ गया। बाबू साहबने पूछा—" ताअीको क्यों नहीं ले जायगा ? "

बालक—" ताअी हमें प्याल (प्यार) नहीं करतीं। "

बाबू०—" जो प्यार करें, तो ले जायगा ? "

बालकको अिसमें कुछ सन्देह था। ताअीका भाव देखकर अुसे यह आशा नहीं थी कि वह प्यार करेंगी। अिससे बालक मौन रहा।

बाबू साहबने फिर पूछा—" क्यों रे, बोलता नहीं ? ताअी प्यार करें तो रेलपर बिठाकर ले जायगा ? "

बालकने ताअूजीको प्रसन्न करनेके लिये केवल सिर हिलाकर स्वीकार कर लिया, परन्तु मुखसे कुछ नहीं कहा!

बाबू साहब अुसे अपनी अर्धांगिनीजीके पास ले जाकर अुनसे बोले—" लो, अिसे प्यार कर लो, यह तुम्हें भी ले जायगा। "

परन्तु बच्चेकी ताअी श्रीमती रामेश्वरीको पतिकी यह चुहुलबाजी अच्छी न लगी। वह तुनककर बोलीं—"तुम्हीं रेलपर बैठकर जाओ, मुझे नहीं जाना है।"

बाबू साहबने रामेश्वरीकी बातपर ध्यान नहीं दिया। बच्चेको अुनकी गोदमें बिठानेकी चेष्टा करते हुअे बोले—"प्यार नहीं करोगी, तो फिर रेलमें नहीं बिठायेगा।—क्यों रे, मनोहर!"

मनोहरने ताअूकी बातका अुत्तर नहीं दिया। अुधर ताअीने मनोहरको अपनी गोदसे ढकेल दिया। मनोहर नीचे गिर पड़ा। शरीरमें तो चोट नहीं लगी; पर हृदयमें चोट लगी। बालक रो पड़ा।

बाबू साहबने बालकको गोदमें अुठा लिया; चुमकार[१]-पुचकारकर चुप किया, और तत्पश्चात् अुसे कुछ पैसे तथा रेलगाड़ी ला देनेका वचन देकर छोड दिया। बालक मनोहर भय-पूर्ण दृष्टिसे अपनी ताअीकी ओर ताकता हुआ अुस स्थानसे चला गया।

मनोहरके चले जानेपर बाबू रामजीदास रामेश्वरीसे बोले—"तुम्हारा यह कैसा व्यवहार है? बच्चेको ढकेल दिया, जो अुसको चोट लग जाती तो?"

रामेश्वरी मुँह लटकाकर बोलीं—"लग जाती, तो अच्छा होता। क्यों मेरी खोपड़ीपर लादे देते थे? आप ही तो अुसे मेरे अूपर डालते थे, और अब आप ही अैसी बातें करते हैं।"

बाबू साहब कुढ़कर बोले—"अिसीको खोपड़ीपर लादना कहते हैं।"

रामेश्वरी—"और नहीं किसे कहते हैं? तुम्हें तो अपने आगे और किसीका दुख-सुख सूझता ही नहीं। न जाने कब किसका जी कैसा होता है। तुम्हें अिन बातोंकी कुछ परवाह ही नहीं; अपनी चुहुलसे काम है।"

बाबू०—"बच्चोंकी प्यारी प्यारी बातें सुनकर तो चाहे जैसा जी हो, प्रसन्न हो जाता है। मगर तुम्हारा हृदय न जाने किस धातुका बना हुआ है!"

रामेश्वरी—"तुम्हारा हो जाता होगा। और होनेको होता भी है; मगर वैसा बच्चा भी तो हो! पराये धनसे भी कहीं घर भरता है?"

बाबू साहब कुछ देर चुप रहकर बोले—"यदि अपना सगा भतीजा भी पराया धन कहा जा सकता है, तो फिर मैं नहीं समझता कि अपना धन किसे कहेंगे।"

रामेश्वरी कुछ अुत्तेजित होकर बोलीं—"बातें बनाना बहुत आता है। तुम्हारा भतीजा है, तुम चाहे जो समझो; पर मुझे ये बातें अच्छी नहीं लगतीं। हमारे भाग ही फूटे हैं; नहीं तो ये दिन काहेको देखने पड़ते? तुम्हारा चलन तो दुनियासे निराला है। आदमी सन्तानके लिये न जाने क्या क्या करते हैं—पूजा-पाठ कराते है, व्रत रखते हैं, पर तुम्हें अिन बातोंसे क्या काम? रात-दिन भाअी-भतीजोंमें मगन रहते हो।"

बाबू साहबके मुखपर घृणाका भाव झलक आया। अुन्होंने कहा—"पूजा पाठ, व्रत सब ढकोसला है। जो वस्तु भाग्यमें नहीं, वह पूजा-पाठसे कभी प्राप्त नहीं हो सकती। मेरा तो यह अटल विश्वास है।"

श्रीमतीजी कुछ रुआँसे स्वरमें बोलीं—"अिसी विश्वासने तो सब चौपट कर रखा है! अैसे ही विश्वासपर सब बैठ जायँ, तो काम कैसे चले? सब विश्वासपर ही बैठे रहें, तो आदमी काहेको किसी बातके लिये चेष्टा करे?"

बाबू साहबने सोचा कि मूर्ख स्त्रीके मुँह लगना ठीक नहीं। अतअेव वह स्त्रीकी बातका कुछ अुत्तर न देकर वहाँसे टल गये।

२

बाबू रामजीदास धनी आदमी हैं। कपड़ेकी आढ़तका काम करते हैं। लेन-देन भी है। अिनके अेक छोटा भाअी है। अुसका नाम है, कृष्णदास। दोनों भाअियोंका परिवार अेक ही में है। बाबू रामजीदासकी आयु ३९ वर्षके लगभग है, और छोटे भाअी कृष्णदासकी ३१ के करीब। रामजीदास निस्सन्तान हैं। कृष्णदासके दो सन्तानें हैं। अेक पुत्र—वही पुत्र, जिससे पाठक परिचित हो चुके हैं—और अेक कन्या है। कन्याकी आयु दो वर्षके लगभग है।

रामजीदास अपने छोटे भाअी और अुनकी सन्तानपर बड़ा स्नेह रखते है—अैसा स्नेह कि अुसके प्रभावसे अुन्हें

अपनी सन्तानहीनता कभी खटकती ही नहीं। छोटे भाओीकी संतानको वे अपनी समझते हैं। दोनों बच्चे भी रामजीदाससे अितने हिले-मिले हैं कि अुन्हें अपने पितासे भी अधिक समझते हैं।

परन्तु रामजीदासकी पत्नी रामेश्वरीको अपनी संतान-हीनताका बड़ा दुःख है। वह दिन-रात संतान ही के सोचमें घुला करती है। छोटे भाओीकी संतानपर पतिका प्रेम अुसकी आँखोंमें काँटेकी तरह खटकता है।

रातको भोजन अित्यादिसे निवृत्त होकर रामजीदास शय्यापर लेटे हुअे शीतल और मंद वायुका आनन्द ले रहे थे। पास ही दूसरी शय्यापर रामेश्वरी, हथेलीपर सिर रखे, किसी चिन्तामें डूबी हुअी थी। दोनों बच्चे अभी बाबू साहबके पाससे अुठकर अपनी माँके पास गये थे।

बाबू साहबने अपनी स्त्रीकी ओर करवट लेकर कहा—"आज तुमने मनोहरको अिस बुरी तरहसे ढकेला था कि मुझे अब तक अुसका दुःख है। कभी कभी तो तुम्हारा व्यवहार बिलकुल ही अमानुषिक हो अुठता है।"

रामेश्वरी बोली—"तुम्हींने मुझे अैसा बना रखा है। अुस दिन अुस पंडितने कहा था कि हम दोनोंके जन्म-पत्रमें संतानका जोग है, और अुपाय करनेसे सन्तान हो भी सकती है। अुसने अुपाय भी बताये थे; पर तुमने अुनमेंसे अेक भी अुपाय करके न देखा। बस, तुम तो अिन्हीं दोनोंमें मगन

हो। तुम्हारी अिस बातसे रात-दिन मेरा कलेजा सुलगता रहता है। आदमी अुपाय तो करके देखता है। फिर होना, न होना तो भगवानके अधीन है।"

बाबू साहब हँसकर बोले—"तुम्हारी-जैसी सीधी स्त्री भी....क्या कहूँ, तुम अिन ज्योतिषोंकी बातोंपर विश्वास करती हो, जो दुनियाभरके झूठे और धूर्त हैं। ये झूठ बोलने ही की रोटियाँ खाते है।"

रामेश्वरी तुनककर बोली--"तुम्हें तो सारा संसार झूठा ही दिखाअी पड़ता है। ये पोथी-पुराण भी सब झूठे है? पंडित कुछ अपनी तरफ़से तो बनाकर कहते ही नहीं है; शास्त्रमें जो लिखा है, वही वे भी कहते हैं। शास्त्र झूठा है, तो वे भी झूठे हैं। अँगरेज़ी क्या पढी, अपने आगे किसीको गिनते ही नहीं। जो बातें बाप-दादोंके जमानेसे चली आयी है, अुन्हें भी झूठा बनाते हो।"

बाबू साहब—"तुम बात तो समझती ही नहीं, अपनी ही ओटे जाती हो। मैं यह नहीं कहता कि ज्योतिष-शास्त्र झूठा है। संभव है वह सच्चा हो। परन्तु ज्योतिषियोंमें अधिकांश झूठे होते है। अुन्हें ज्योतिषका पूर्ण ज्ञान तो होता नहीं, दो-अेक छोटी-मोटी पुस्तकें पढ़कर ज्योतिषी बन बैठते हैं और लोगोंको ठगते फिरते है। अैसी दशामें अुनपर कैसे विश्वास किया जा सकता है?"

रामेश्वरी—"हूँ; सब झूठे ही हैं, तुम्हीं अेक सच्चे

हो ! अच्छा, अेक बात पूछती हूँ। भला, तुम्हारे जीमें संतानकी अिच्छा क्या कभी नहीं होती ?"

अिस बार रामेश्वरीने बाबू साहबके हृदयका कोमल स्थान पकड़ा। वह कुछ देर चुप रहे। तत्पश्चात् अेक लम्बी साँस लेकर बोले—" भला, और कौन मनुष्य होगा, जिसके हृदयमें संतानका मुख देखनेकी अिच्छा न हो। परन्तु किया क्या जाय ? जब नहीं है, और न होनेकी कोअी आशा ही है, तब अुसके लिये व्यर्थ चिन्ता करनेसे क्या लाभ ? अिसके सिवा, जो बात अपनी संतानसे होती, वही भाअीकी संतानसे भी हो रही है। जितना स्नेह अपनीपर होता, अुतना ही अिनपर भी है, जो आनन्द अुनकी क्रीड़ासे आता, वही अिनसे भी आ रहा है। फिर मैं नहीं समझता कि चिन्ता क्यों की जाय।"

रामेश्वरी कुढ़कर बोली—" तुम्हारी समझको मैं क्या कहूँ ! अिसीसे तो रात-दिन जला करती हूँ। भला, यह बताओ कि तुम्हारे पीछे क्या अिन्हींसे तुम्हारा नाम चलेगा ?"

बाबू साहब हँसकर बोले—" अरे तुम भी कहाँकी पोच बातें लायीं। नाम संतानसे नहीं चलता। नाम अपनी सुकृतिसे चलता है। तुलसीदासको देशका बच्चा बच्चा जानता है। सूरदासको मरे कितने दिन हो चुके। अिसी प्रकार कितने महात्मा हो गये हैं। अुन सबका नाम क्या अुनकी संतान ही की बदौलत चल रहा है ? सच पूछो, तो

संतानसे जितनी नाम चलनेकी आशा रहती है, अुतनी नाम डूब जानेकी भी संभावना रहती है। परन्तु सुकृति अेक अैसी वस्तु है जिससे नाम बढ़नेके सिवा घटनेकी आशंका रहती ही नहीं। हमारे शहरमें राय गिरधारीलाल कितने नामी आदमी थे। अुनके संतान कहाँ है? पर अुनकी धर्मशाला और अनाथालयसे अुनका नाम अब तक चला जा रहा है, और अभी न जाने कितने दिनों तक चला जायगा।"

रामेश्वरी—"शास्त्रमें लिखा है, जिसके पुत्र नहीं होता अुसकी मुक्ति नहीं होती।"

बाबू०—"मुक्तिपर मुझे विश्वास ही नहीं। मुक्ति है किस चिड़ियाका नाम? यदि मुक्ति होना मान भी लिया जाय, तो यह कैसे माना जा सकता है कि सब पुत्रवानोंकी मुक्ति हो जाती है? मुक्तिका भी क्या सहज अुपाय है? ये जितने पुत्रवाले हैं, सभीकी तो मुक्ति हो ही जाती होगी।"

रामेश्वरी निरुत्तर होकर बोली—"अब तुमसे कौन बकवाद करे? तुम तो अपने सामने किसीको मानते ही नहीं।"

२

मनुष्यका हृदय बड़ा ममत्व-प्रेमी है। कैसी ही अुपयोगी और कितनी ही सुन्दर वस्तु क्यों न हो, जब तक मनुष्य अुसको परायी समझता है, तब तक अुससे प्रेम नहीं करता किन्तु भद्दीसे-भद्दी और बिलकुल काममें न आनेवाल

वस्तुको भी यदि मनुष्य अपनी समझता है, तो अुससे प्रेम करता है। परायी वस्तु कितनी ही मूल्यवान क्यों न हो, कितनी ही अुपयोगी क्यों न हो, कितनी ही सुन्दर क्यों न हो, अुसके नष्ट होनेपर मनुष्य कुछ भी दुःखका अनुभव नहीं करता, अिसलिये कि वह वस्तु अुसकी नहीं, परायी है। अपनी वस्तु कितनी ही भद्दी हो, काममें न आनेवाली हो, अुसके नष्ट होनेपर मनुष्यको दुःख होता है, अिसलिये कि वह अपनी चीज है। कभी कभी अैसा भी होता है कि मनुष्य परायी चीज़से प्रेम करने लगता है। अैसी दशामें भी जब तक मनुष्य अुस वस्तुको अपनी बनाकर नहीं छोड़ता, अथवा अपने हृदयमें यह विचार नहीं दृढ़ कर लेता कि यह वस्तु मेरी है, तब तक अुसे सन्तोष नहीं होता। ममत्वसे प्रेम अुत्पन्न होता है, और प्रेमसे ममत्व। अिन दोनोंका साथ चोलीदामनका-सा है। ये कभी पृथक नहीं किये जा सकते।

यद्यपि रामेश्वरीको माता बननेका सौभाग्य प्राप्त नहीं हुआ था, तथापि अुसका हृदय अेक माताका हृदय बननेकी पूरी योग्यता रखता था। अुसके हृदयमें वे गुण विद्यमान तथा अंतर्निहित थे, जो अेक माताके हृदयमें होते हैं; परन्तु अुनका विकास नहीं हुआ था। अुसका हृदय अुस भूमिकी तरह था, जिसमें बीज तो पड़ा हुआ है, पर अुसको सींचकर और अिस प्रकार बीजको प्रस्फुटित करके भूमिके अूपर लानेवाला कोअी नहीं। अिसीलिये अुसका हृदय अुन बच्चोंकी ओर खिंचता तो था, परन्तु जब अुसे ध्यान

आता था कि ये बच्चे मेरे नहीं, दूसरेके हैं, तब अुसके हृदयमें अुनके प्रति द्वेष अुत्पन्न होता था, घृणा पैदा होती थी। विशेषकर अुस समय अुसके द्वेपकी मात्रा और भी बढ़ जाती थी, जब वह देखती थी कि अुसके पतिदेव अुन बच्चों पर प्राण देते है जो अुसके (रामेश्वरीके) नहीं है।

शामका समय था। रामेश्वरी खुली छतपर बैठी हवा खा रही थी। पास ही अुसकी देवरानी भी बैठी थी। दोनों बच्चे छतपर दौड़ दौड़कर खेल रहे थे। रामेश्वरी अुनके खेलको देख रही थी। अिस समय रामेश्वरीको अुन बच्चोंका खेलना-कूदना बड़ा भला मालूम हो रहा था। हवामें अुडते हुअे अुनके बाल, कमल की तरह खिले हुअे अुनके नन्हें नन्हें मुख, अुनकी प्यारी प्यारी तोतली बातें, अुनका चिल्लाना, भागना, लौट जाना, अित्यादि क्रीडाअें अुसके हृदयको शीतल कर रही थीं। सहसा मनोहर अपनी बहनको मारने दौड़ा। वह खिलखिलाती हुअी दौड़कर रामेश्वरकी गोदमें जा गिरी। अुसके पीछे पीछे मनोहर भी दौड़ा हुआ आया, और वह भी अुसकी गोदमें जा गिरा। रामेश्वरी अुस समय सारा द्वेष भूल गयी। अुसने दोनों बच्चोंको अुस प्रकार हृदयसे लगा लिया, जिस प्रकार वह मनुष्य लगाता है, जो कि बच्चोंके लिये तरस रहा हो। अुसने बड़ी सतृष्णतासे दोनोंको प्यार किया। अुस समय कोअी अपरिचित मनुष्य अुसे देखता, तो अुसे यही विश्वास होता कि रामेश्वरी ही अुन बच्चोंकी माता है।

दोनों बच्चे बड़ी देर तक अुसकी गोदमें खेलते रहे। सहसा अुसी समय किसीके आनेकी आहट पाकर बच्चोंकी माता वहाँसे अुठकर चली गयी।

"मनोहर, ले रेलगाडी!" कहते हुअे बाबू रामजीदास छतपर आये। अुनका स्वर सुनते ही दोनों बच्चे रामेश्वरीकी गोदसे तड़पकर निकल भागे। रामजीदासने पहले दोनोंको खूब प्यार किया। फिर बैठकर रेलगाड़ी दिखाने लगे।

अिधर रामेश्वरीकी नींद-सी टूटी। पतिको बच्चोंमें मगन होते देखकर अुसकी भौंहें तन गयीं। बच्चोंके प्रति हृदयमें फिर वही घृणा और द्वेषका भाव जग अुठा।

बच्चोंको रेलगाड़ी देकर बाबू साहब रामेश्वरीके पास आये और मुसकराकर बोले--"आज तो तुम बच्चोंको बड़ा प्यार कर रही थी! अिससे मालूम होता है कि तुम्हारे हृदयमें भी अिनके प्रति कुछ प्रेम अवश्य है।"

रामेश्वरीको पतिकी यह बात बहुत बुरी लगी। अुसे अपनी कमज़ोरीका बहुत बड़ा दुःख हुआ। केवल दुःख ही नहीं, अपने अूपर क्रोध भी आया। वह दुःख और क्रोध पतिके अुक्त वाक्यसे और भी बढ़ गया। अुसकी कमज़ोरी पतिपर प्रकट हो गयी, यह बात अुसके लिये असह्य हो अुठी।

रामजीदास बोले--"अिसीलिये मै कहता हूँ कि अपनी संतानके लिये सोच करना वृथा है। यदि तुम अिनसे प्रेम करने लगो, तो तुम्हें ये ही अपनी सन्तान प्रतीत होने

लगेंगे। मुझे अिस बातसे प्रसन्नता है कि तुम अिनसे स्नेह करना सीख रही हो।"

यह बात बाबू साहबने नितांत शुद्ध हृदयसे कही थी; परन्तु रामेश्वरीको अिसमें व्यंगकी तीक्ष्ण गंध मालूम हुअी। अुसने कुढ़कर मनमें कहा--"अिन्हें मौत भी नहीं आती। मर जायँ, पाप कटे! आठों पहर आँखोंके सामने रहनेसे प्यार करनेको जी ललच ही अुठता है। अिनके मारे कलेजा और भी जला करता है।"

बाबू साहबने पत्नीको मौन देखकर कहा--"अब झेंपनेसे क्या लाभ? अपने प्रेमको छिपाना व्यर्थ है। छिपाने की आवश्यकता भी नहीं!"

रामेश्वरी जल-भुनकर बोली--"मुझे क्या पड़ी है, जो मै प्रेम करूँगी? तुम्हींको मुबारक रहे! निगोड़े आप ही आ-आकर घुसते है। अेक घरमें रहनेसे कभी कभी हँसना-बोलना पड़ता ही है। अभी परसों ज़रा योंही ढकेल दिया, अुसपर तुमने सैकड़ों बातें सुनायीं। संकटमें प्राण हैं--न यों चैन, न वों चैन।"

बाबू साहबको पत्नीके वाक्य सुनकर बड़ा क्रोध आया। अुन्होंने कर्कश स्वरमें कहा--'न जाने कैसे हृदयकी स्त्री है। अभी अच्छी खासी बैठी बच्चोंको प्यार कर रही थी। मेरे आते ही गिरगिटकी तरह रंग बदलने लगी। अपनी अिच्छासे चाहे जो करे, पर मेरे कहनेसे बल्लियों अुछलती

है। न जाने मेरी बातोंमें कौन-सा विष घुला रहता है। यदि मेरा कहना ही बुरा मालूम होता है, तो न कहा करूँगा। पर अितना याद रखो कि अब जो कभी अिनके विषयमें निगोड़े-सिगोड़े अित्यादि अपशब्द निकाले, तो अच्छा न होगा! तुमसे मुझे ये बच्चे कहीं अधिक प्यारे हैं।"

रामेश्वरीने अिसका कोअी अुत्तर न दिया। अपने क्षोभ तथा क्रोधको वह आँखों द्वारा निकालने लगी।

जैसे-हीं जैसे बाबू रामजीदासका स्नेह दोनों बच्चोंपर बढ़ता जाता था, वैसे-ही-वैसे रामेश्वरीके द्वेष और घृणाकी मात्रा भी बढ़ती जाती थी। प्रायः बच्चोंके पीछे पति-पत्नीमें कहा सुनी हो जाती थी, और रामेश्वरीको पतिके कटु वचन सुनने पडते थे। जब रामेश्वरीने यह देखा कि बच्चोंके कारण ही वह पतिकी नज़रोंमें गिरती जा रही है, तब अुसके हृदयमें बड़ा तूफान अुठा। अुसने सोचा--पराये बच्चोंके पीछे यह मुझसे प्रेम कम करते जाते हैं, मुझे हर समय बुरा-भला कहा करते हैं। अिनके लिये ये बच्चे ही सब कुछ हैं, मैं कुछ भी नहीं। दुनिया मरती जाती है, पर अिन दोनोंको मौत नहीं। ये पैदा होते ही क्यों न मर गये? न ये होते, न मुझे ये दिन देखने पड़ते। जिस दिन ये मरेंगे अुस दिन घीके दिये जलाअूँगी। अिन्होंने ही मेरा घर सत्यानाश कर रखा है।

अिसी प्रकार कुछ दिन व्यतीत हुअे। अेक दिन नियमानुसार रामेश्वरी छतपर अकेली बैठी हुअी थी। अुसके हृदयमें

अनेक प्रकारके विचार आ रहे थे। विचार और कुछ नहीं, वही अपनी निजकी सन्तानका अभाव, पतिका भाओीकी सन्तानके प्रति अनुराग, अित्यादि। कुछ देर बाद अुसके विचार स्वयं अुसको कष्ट-दायक प्रतीत होने लगे। तब वह अपना ध्यान दूसरी ओर लगानेके लिये अुठकर टहलने लगी।

वह टहल ही रही थी कि मनोहर दौड़ता हुआ आया। मनोहरको देखकर अुसकी भृकुटि चढ़ गयी, और वह छतकी चहारदीवारीपर हाथ रखकर खड़ी हो गयी।

सन्ध्याका समय था। आकाशमें रंग-बिरंगी पतंगें अुड़ रही थीं। मनोहर कुछ देर तक खड़ा पतंगोंको देखता और सोचता रहा कि कोओी पतंग कटकर अुसकी छतपर गिरे, तो क्या ही आनन्द आये! देर तक पतंग गिरनेकी आशा करनेके बाद वह दौड़कर रामेश्वरीके पास आया, और अुसकी टाँगोंमें लिपटकर बोला—"ताओी, हमें पतंग मँगा दो।" रामेश्वरीने झिड़ककर कहा—"चल हट, अपने ताअूसे माँग जाकर।"

मनोहर कुछ अप्रतिभ होकर फिर आकाशकी ओर ताकने लगा। थोड़ी देर बाद अुससे फिर न रहा गया। अिस बार अुसने बड़े लाड़में आकर अत्यन्त करुण स्वरमें कहा—"ताओी, पतंग मँगा दो; हम भी अुड़ायेंगे।"

अिस बार अुसकी भोली प्रार्थनासे रामेश्वरीका कलेजा कुछ पसीज गया। वह कुछ देर तक अुसकी ओर स्थिर

दृष्टिसे देखती रही। फिर अुसने अेक लम्बी साँस लेकर मन-ही-मन कहा—यदि यह मेरा पुत्र होता, तो आज मुझसे बढ़कर भाग्यवान स्त्री संसारमें दूसरी न होती। निगोड़-मारा कितना सुन्दर है, और कैसी प्यारी प्यारी बातें करता है! यही जी चाहता है कि अुठाकर छातीसे लगा लें।

यह सोचकर वह अुसके सिरपर हाथ फेरनेवाली ही थी कि अितनेमें मनोहर अुसे मौन देखकर बोला—"तुम हमें पतंग नहीं मँगवा दोगी, तो ताअूजीसे कहकर तुम्हें पिटवायेंगे।"

यद्यपि बच्चेकी अिस भोली बातमें भी बड़ी मधुरता थी, तथापि रामेश्वरीका मुख क्रोधके मारे लाल हो गया। वह अुसे झिड़ककर बोली—"जा कह दे अपने ताअूजीसे। देखूं, वह मेरा क्या कर लेंगे!"

मनोहर भयभीत होकर अुनके पाससे हट आया, और फिर सतृष्ण नेत्रोंसे आकाशमें अुडती हुअी पतंगोंको देखने लगा।

अिधर रामेश्वरीने सोचा—यह सब ताअूजीके दुलारका फल है, कि बलिस्त-भरका लड़का मुझे धमकाता है। अीश्वर करे, अिस दुलारपर बिजली टूटे।

अिसी समय आकाशसे अेक पतंग कटकर अुसी छतकी ओर आयी, और रामेश्वरीके अुपरसे होती हुअी छज्जेकी ओर गयी। छतके चारों ओर चहारदीवारी थी। जहाँ रामेश्वरी

खड़ी हुअी थी, केवल वहाँपर अेक द्वार था, जिससे छज्जेपर आ-जा सकते थे। रामेश्वरी अुस द्वारसे सटी हुअी खड़ी थी। मनोहरने पतंगको छज्जेपर जाते देखा। पतंग पकड़नेके लिये वह दौड़कर छज्जेकी ओर चला। रामेश्वरी खड़ी देखती रही। मनोहर अुसके पास होकर पतंगको देखने लगा। पतंग छज्जेपरसे होती हुअी नीचे, घरके आँगनमें, जा गिरी। अेक पैर छज्जेकी मुँडेरपर रखकर मनोहरने नीचे आँगमनमें, झाँका, और पतंगको आँगनमें गिरते देख प्रसन्नताके मारे फूला न समाया। वह नीचे जानेके लिये शीघ्रतासे घूमा। परन्तु घूमते समय मुँडेरपरसे अुसका पैर फिसल गया। वह नीचेकी ओर चला। नीचे जाते जाते अुसके दोनों हाथोंमें मुँडेर आ गयी। वह अुसे पकड़कर लटक गया, और रामेश्वरीकी ओर देखकर चिल्लाया—"ताअी!"

रामेश्वरीने धड़कते हुअे अिस घटनाको देखा। अुसके मनमें आया कि अच्छा है, मरने दो, सदाका पाप कट जायगा। यही सोचकर वह अेक लक्पके लिये रुकी! अुधर मनोहरके हाथ मुँडेरपरसे फिसलने लगे। वह अत्यन्त भय तथा करुण नेत्रोंसे रामेश्वरीकी ओर देखकर चिल्लाया—"अरी ताअी!" रामेश्वरीकी आँखें मनोहरकी आंखोंसे जा मिलीं। मनोहरकी वह करुण दृष्टि देखकर रामेश्वरीका कलेजा मुँहको आ गया। अुसने व्याकुल होकर मनोहरको पकड़नेके लिये अपना हाथ बढ़ाया। अुसका हाथ मनोहरके हाथ तक पँहुचा ही था कि

मनोहरके हाथसे मुँडेर छूट गयी। वह नीचे आ गिरा। रामेश्वरी चीख़ मारकर छज्जेपर गिर पड़ी।

रामेश्वरी अेक सप्ताह तक बुखारमें बेहोश पड़ी रही। कभी कभी वह जोरसे चिल्ला अुठती, और कहती—"देखो देखो, वह गिरा जा रहा है—अुसे बचाओ—दौड़ो—मेरे मनोहरको बचा लो।" कभी वह कहती--"बेटा मनोहर, मैंने तुझे नहीं बचाया। हाँ, हाँ, चाहती तो बचा सकती थी—मैंने देर कर दी।" अिसी प्रकारके प्रलाप वह किया करती।

मनोहरकी टांग अुखड़ गयी थी। टाँग बिठा दी गयी। वह क्रमशः फिर अपनी असली हालतपर आने लगा।

अेक सप्ताह बाद रामेश्वरीका ज्वर कम हुआ। अच्छी तरह होश आनेपर अुसने पूछा—"मनोहर कैसा है?"

रामजीदासने अुत्तर दिया—"अच्छा है।"

रामेश्वरी--"अुसे मेरे पास लाओ।"

मनोहर रामेश्वरीके पास लाया गया। रामेश्वरीने अुसे प्यारसे हृदयसे लगाया। आँखोंसे आँसुओंकी झड़ी लग गयी। हिचकियोंसे गला रुँध गया।

रामेश्वरी कुछ दिनों बाद पूर्ण स्वस्थ हो गयी। अब मनोहरकी बहन चुन्नीसे भी द्वेष और घृणा नहीं करती। और मनोहर तो अुसका प्राणाधार हो गया है। अुसके विना अुसे अेक क्षण भी कल नही पड़ती।

चचेरे भाओी

दिनकरलाल अेक प्राचीन देसाओी परिवारके वंशज थे। अुन्होंने तो नहीं, मगर अुनके पूर्वजोंने गुजरातकी बादशाहत कायम करनेमें बहुत आगे बढ़कर काम किया था। अुस बादशाहतके कमज़ोर पड़नेपर गुजरातमें मुग़लोंको लाने और अुनकी हुकूमत जमानेमें अुनके दूसरे पूर्वजोंने अपने प्राण न्योछावर किये थे। जब मुग़लोंकी साख भी डगमगाने लगी तो पेशवा–गायकवाड़को अिन्हीं देसाअियोंके किसी पूर्वजकी सहायता लेनी पड़ी; और मराठोंका सूर्यास्त होनेपर देसाअियोंने कम्पनी बहादुरकी भी मदद की। दिनकरलाल देसाओीका यह दृढ विश्वास था कि देसाअियोंकी सहायताके बिना अिनमेसे अेक भी राज्य कायम न हो सका होता। अिसके प्रमाणमें वे बीसों–मराठीकी अनेक चिट्ठियों, सनदों, प्रमाण-पत्रों, फ़रमानों और ख़रीतोंके—पुराने बंडल सबको दिखाया करते थे। और अिस ख़यालसे कि शायद अितना काफ़ी न हो, वे अपने श्रोताओंको कोओी पच्चीस देसाअियोंका दिलचस्प अितिहास सुनाया और सिखाया करते थे।

श्री दिनकरलाल बड़े विस्तारके साथ—सन्, सम्वत् और तारीखका हवाला देकर—अपने श्रोताओंको सारा अितिहास सुनाया करते। वह कहते—" महम्मद बेगड़ाकी

भूखों मरती फ़ौजके पास अैन मौकेपर निहायत चतुराओके साथ नाजके बोरे किसने पहुँचाये? अिन्द्रजीत देसाओीने। शिकार खेलते हुअे जब बादशाह अकबर जंगलमें रास्ता भूल गये तो अुनके लिये जलपानका निहायत सुन्दर प्रबन्ध किसने किया? पद्मनाभ देसाओीने। बारिशके दिनोंमें जब औरंगजब-का अेक हाथी दलदलमें फँस गया तो देहातियोंका अेक दल जुटाकर पूरे-के-पूरे हाथीको दलदलसे बाहर किसने निकाला? कुँवरजी देसाओीने। गोविन्दराव गायकवाड़की पराजित सेनाको प्रोत्साहित करके अंग्रेज बहादुरोंके छक्के किसने छुड़ाये? मुरलीधर देसाओीने।

अभी तक आधुनिक ढंगसे अिस बातका कोओी अन्वेषण नहीं हो पाया कि अितिहासकारोंने अिनमेंसे किसी घटनाका अपने अितिहासमें कहीं अुल्लेख भी किया है या नहीं। वह जो कुछ भी हो; अिसमें कोओी शक नहीं कि देसाअिगिरीका अभिमान घटानेवाले श्री दिनकरलालके पूर्वजोंने काफ़ी बड़ी ज़मींदारी पायी थी और देसाअियोंके वैभव और प्रतिष्ठाकी किसी समय बड़ी धूम थी।

धूम थी अिसलिये कहता हूँ कि दिनकरलालके समयमें यह वैभव और यह प्रतिष्ठा अतीतके अन्धकारमें विलीन होने लगी थी। अुनका अपना अेक आलीशान मकान था, घरमें नौकर-चाकरोंकी कमी न थी। बैलगाड़ी थी, बग्घी थी, मगर अुसका घोड़ा मर चुका था और नया ख़रीदनेकी चर्चा

थी। मेहमानोंका ताँता बँधा रहता था। कलेक्टर, असिस्टैंट कलेक्टर, तहसीलदार, रेलवे अधिकारी, सभी दिनकरलाल देसाओीके मेहमान होते थे और अुनकी दावतोंमें वह ज़रूर हाज़िर रहते थे। दिनकरलाल आग्रह-अनुरोधकी कलामें प्रवीण थे। हर महीने दावतें झड़ती थीं और दावतोंके ये अवसर देसाअिगिरीकी गौरव वृद्धिके साथ स्वयं भी वृद्धिंगत होते जाते थे।

दावतोंमें शरीक होनेवालोंको देसाओीकी आर्थिक स्थितिके विचार करनेकी तनिक भी आवश्यकता न थी। लेकिन अुनके साहूकारोंको अेकाअेक अिसके विचार करनेकी ज़रूरत मालूम हुओी। अब तक तो अपनी ज़मीनें रेहन रख रखकर देसाओी मनमाना धन पाते रहे; लेकिन अब साहूकारोंने बहानोंसे काम लेना शुरू किया, और वे दिनकरलालके रुक्कोंको लौटाने लगे, अुन्हें कर्ज देनेसे आनाकानी करने लगे। अुनकी साखपर तो पहले ही कोओी अुन्हें कर्ज़ देता न था; अब ज़मीनें भी सब रेहन रखी जा चुकी थीं, अिसलिये आसपासके सभी साहूकार चौकन्ने हो गये थे और हाथ खोलते नहीं थे।

देसाओीका यह ख़याल था कि यह सब साहूकारोंके ओछेपनका परिणाम है। साहूकार हमेशा ओछे ही होते हैं। मूलधनसे तिगुनीचौगुनी रक़म व्याजमें ले लेनेके बाद भी अुनका कर्ज़ बना रहता है। साहूकारोंका यह जादू तो शायद परमात्मा भी न जानता होगा। कैसे आश्चर्यकी बात

है कि जो लोग जीवन भर बँटाअी, पगड़ी, दलाली, थैली छुड़ाअी आदिकी शानदार धार्मिक क्रियाओंके बाद दुगुने-चौगुने व्याजपर रक़म अुधार देते हैं, वही अदालतमें दावा तक करनेकी नीचता प्रकट करते हैं !

२

दिनकर देसाअी साहूकारोंके अिस ओछेपनेको अुनकी अिस क्षुद्रताको सह लेते थे; लेकिन अपने चचेरे भाअी विजयलाल देसाअीकी नीचता अुनसे तनिक भी न सही जाती थी। कुछ वर्ष तो दोनोंने मिलकर देसाअिगिरी की; लेकिन सूक्ष्म-दृष्टि विजयलाल विजू देसाअी अपने समवयस्क और सम-समान मालिक दिनकरलालकी अुदारतासे, जिसे फिजूलखर्ची कहकर वह अपने मनकी क्षुद्रता प्रकट करते थे, घबरा अुठे; और दीवानी अदालत तक जाकर अलगौझा करा लिया। फिर अपने हिस्सेकी संपत्ति लेकर वह स्वतन्त्र रूपसे अपना कारोबार चलाने लगे।

दिनकर देसाअीको अिससे जरा भी प्रसन्नता न हुअी। जो परिवार कअी पुश्तोंसे अेक रहकर अपने पूर्वजोंकी संपत्तिका अुपभोग कर रहा था, अुसका यों खण्ड खण्ड हो जाना अुन्हें अच्छा न लगा। अिस घटनासे दोनों भाअियोंके दिलमें गहरी गाँठ पड़ गयी। दोनों अेक दूसरेके दुश्मन भी बन गये। और यद्यपि अपने पराक्रमी पूर्वजोंकी तरह तलवार हाथमें लेकर परस्पर लड़नेकी शूरता किसीमें न थी,

फिर भी गाली-गलौज, तेरी-मेरी और तानों-तिरनोंके प्रयोग द्वारा वे बार बार अपनी वीरताका परिचय दिया करते थे।

दोनोंके घरकी दीवार अेक ही थी। अेक ही घरके दो हिस्से कर लिये गये थे; अिसलिये प्रकट युद्धके अवसरोंके अतिरिक्त भी वे टीका-टिप्पणी द्वारा अेक दूसरेपर छींटे अुड़ाकर लड़नेका आनन्द अुठा लिया करते थे।

"अुसे देसाअी कहता कौन है? वह तो बनिया है; बनिया। जरा अुसका दिल तो देखो!" कहते समय दिनकर देसाअी अपनी आवाज़को अितना बुलन्द करते कि दोनों घरके लोग भली भाँति सुन लेते।

यह सोचकर कि ये छींटे मुझीपर अुड़ाये जा रहे हैं, विजू देसाअीका चेहरा तमतमा अुठता—वह आग-बबूला हो जाते। अुन्हें याद आता कि यह दिनकर कलेक्टरों और कमिश्नरोंको दावतें देता है, फूलोंके हार पहनाता है और झूलेपर बैठकर मौज़से अपने पुरखोंके गीत गाया करता है। बस, दूसरी तरफसे वह भी गरज उठते—

"शेखीखोर कहींका! सारी देसाअिगिरी डुबोने बैठा है!"

दिनकर देसाअी झूलेपरसे आधे अुठ बैठते और चिल्लाकर पूछते—

"तू किसे कह रहा है?"

"तुझीको ! तुझमें अितना समझनेकी अक्ल भी तो हो !"

"बड़ा अकलवर है तू ? धनके हण्डे गाड़कर जायगा न ? साँप बनकर बैठेगा, साँप ! कम्बख्त कहींका !"

और वहीं अेक छोटासा युद्‌ध छिड़ जाता।

अिन युद्‌धोंमें योद्‌धा ये दो भाओी ही होते थे। अिनके घरके स्त्री-बच्चोंपर अिन युद्‌धोंका कोओी असर दिखाओी नहीं देता था। जब दिनकर देसाओी और विजय देसाओी यों आपसमें अेक दूसरेकी पगड़ी अुछालते और प्रहार करते, तब दोनों देसाओी-पत्नियाँ या तो अचार-मुरब्बेकी तैयारीमें लगी मिलतीं, या गहनों-कपड़ोंकी चर्चामें। कभी विजय देसाओीकी पत्नी दिनकर देसाओीकी पुत्रीके बाल सवाँरती मिलतीं, और कभी दिनकर देसाओीकी पत्नी विजय देसाओीके पुत्रको जिमाती होतीं। देसाअियोंके युद्‌धकी विशेषता यह थी कि वह अुन्हीं तक रहता था। कौन कह सकता है कि हमारा सूर्य दूसरे सूर्यके साथ खींचातानी न करता होगा ? फिर भी हमारी पृथ्वीको अुनकी खींचातानीसे कोओी सरोकार नहीं। अुसे तो अुनके झगड़ेका आभास तक नहीं होता। ठीक यही दशा अिन दो युद्‌धप्रिय चचेरे भाअियोंके परिवारकी थी—वे अिनके युद्‌धसे बिलकुल अछूते थे।

दावतके दिन विजय देसाओीको न्योते बिना दिनकर देसाओीसे रहा न जाता। लेकिन विजय देसाओी कदाचित्

ही अुनमें शामिल होते। अैसे समय दिनकरलाल यह कहते सुने जाते—

"वह क्यों आये ? कौन मुँह लेकर आये ! कभी किसीको घर बुलाकर खिलाता भी है ?"

और विजय देसाअी कहते—

"यह दिनकर कैसा बुद्धू है ! अिसे कब अक्ल आयेगी ? मूर्ख खिलाते हैं और मक्कार खाते हैं।"

लेकिन जिस दिन किसी नये अधिकारीको दावत दी जाती और विजय देसाअीको मजबूर जाना पड़ता, तो दिनकर देसाअी खास तौरसे अुनका परिचय कराते। कहते—

"साहब, ये मेरे भाअी हैं। अेक साथ पले हैं और अेक ही पिताका अन्न खाते हैं।"

"अच्छा, अैसी बात है !"—कहते हुअे साहब मुसकराते और देसाअियोंके जीवनमें रस लेनेका अभिनय-सा करते।

"जी हुजूर ! बड़े-बूढ़ोंका पुण्य अभी तक साथ दे रहा है।" विजय देसाअीको भी नम्र होकर कहना पड़ता।

लेकिन दावतके खतम होते ही, दोनों भाअी फिर अुलझ पड़ते। दोनोंको अेक दूसरेसे अितनी अरुचि हो गयी थी, कि सिवा लड़नेके आपसमें और किसी समय वे बोलते तक न थे। दिनकर देसाअी अकेले अधिकारियोंकी

ही खातिर-तवाज़ा न करते थे, बल्कि अतिथि-सत्कार और दान-मानके हर काममें अुनका नाम सबसे आगे रहता था। फिर साधुओंकी जमातको जिमानेका काम हो, सप्ताह-भर रामायण-महाभारतका पाठ करनेवाले शास्त्रीको पगड़ी-दुपट्टा भेंट करनेका काम हो, किसी अुस्ताद गवैयेके अिनाम-अिकरामका सवाल हो, या रामलीलाके प्रबन्ध करनेकी बात हो, वह कहीं पीछे न रहते थे। विजय देसाअी अिन सब कामोंमें कभी सहयोग न देते, और जब देना ही पड़ता, तो रुपया-आठ आना देकर पिण्ड छुड़ा लेते।

कभी कभी कुछ अुत्साही चन्देवाले विजय देसाअीकी तारीफ़का पुल बाँधकर अुन्हें चढ़ानेकी कोशिश करते—

"विजय दादा, यह देखो, दिनकर भैयाने अितने दिये हैं; आप अिससे कम कैसे दे सकते हैं?"

विजय देसाअीको यह तुलना तनिक भी न रुचती वे टका-सा जवाब दे देते—

"अुसे तो भीख माँगनी है। मैं भिखारी नहीं बनना चाहता।"

अुधर दिनकर देसाअीका क्षोभ देखनेकी अेक चीज़ होती। वे अुत्तेजित होकर चन्दा माँगनेवालोंसे कहते—

"अुससे तुम क्या पाओगे? अरे, वह तो अैसा मूँजी है कि सुबह मुँह देख लो, तो दिन-भर अन्नके दर्शन न हों।

अिधर कुछ दिनसे रोज दिनके चार बजे दिनकर देसाअी किसी भाटसे देसाअी वीरोंकी कीर्ती-कथा सुना करते थे। अन्तमें अेक दुशाला भेंट किया। भाटने तुरन्त ही दिनकर देसाअीकी तारीफ़में अेक कवित्व पढ़ा। आशुकविकी प्रतिभावाले अुस देवी-पुत्रने दिनकर देसाअीको सूर्य कहा, चन्द्र कहा, चक्रवर्ती कहा, समुद्रसे भी महान् और हिमालय से भी अुच्च सिद्‌ध करके कुबेरको भी देसाअीका क़र्ज़दार घोषित कर दिया! अिधर भाट अपना पुरस्कार लेकर बिदा हुआ और अुधर देसाअीके अेक पुराने साहूकारने अेक-दो सिपाहियों और मुहर्रिरोंके साथ अुनके घरमें प्रवेश किया। साहूकार जब्ती लेकर आया था। मुंसिफको पाँच-सात बार हरी जुवारके होलेकी दावत देकर और अुपयोगके लिये अेक आलमारी अुनके घर भेजकर दिनकर देसाअी निश्चित हो गये थे। अुन्होंने कभी सोचा तक नहीं कि मुंसिफ अितनी जल्दी जब्तीका हुक्म जारी कर देगा। कअी मामलोंमें ठीक ठीक मेहनताना न मिलनेसे देसाअीजीके वकील भी अुस दिन डुबकी लगा गये।

देसाअीजी बहुत बिगड़े। मानहानिके लिये मुकद्‌दमा चलानेकी धमकी देने लगे। गवर्नर साहबके नाम तार करनेको तैयार हो गये। शामसे पहले साहूकारको अुसकी रकम चुका देनेका वादा किया। मगर साहूकार टस-से-मस न हुआ। वह तो जब्तीका अिरादा करके ही आया था। देसाअी-जीकी सभी युक्तियाँ बेकार हो गयीं। बेचारे हताश हो गये।

अुधर वेलिफ़ और मुहर्रिरोंने साहूकार द्वारा निर्दिष्ट वस्तुओंको जब्त करना शुरू किया।

विजय देसाअी पास ही आँगनमें झूलेपर बैठे सारा दृश्य देख रहे थे। अुनकी मुख-मुद्रा स्थिर और कठोर भाव धारण करती जा रही थी। अितनेमें अुनकी पत्नी अेकाअेक बाहर आयीं और बोलीं—" भैयाके घर जब्ती आयी है।"

" अुसकी तक़दीर! मैं क्या करूँ ?"

" क्या कहते हो ? यह तो अच्छा नहीं मालूम होता। कुछ करना चाहिये।"

" करें अुसके यार दोस्त। कलक्टरों और कमिश्नरोंको बहुत खिलाया है। वे सब मर थोड़े ही गये हैं! क्यों नहीं मदद करते ?"

" कुछ दे-दिलाकर अभी तो अिस सेठको बिदा करो!"

" चार चार, पाँच पाँच बार मैं बीच में पड़ा, जमानतें दीं, लेकिन यह अपनी आदतसे बाज नहीं आता। अब सिवा मकान बेच डालनेके और कोअी रास्ता नहीं। अगर यही हालत रही तो अुसे खुद भी बिकना पड़ेगा।"

यों कहते हुअे विजय देसाअी झूलेपरसे अुतर पड़े और ओसारेमें टहलने लगे। जब्ती कारकुनने बाहर आकर विजय देसाअीसे प्रार्थना की—" देसाअीजी जरा पंचनामेमें मदद कीजियेगा ?"

" जाओ जाओ, किसी दूसरेको बुलाओ। मुझे फुरसत

नहीं है।" कहकर देसाअी अन्दर चले गये। कुछ देर बाद कपड़े पहनकर वे फिर बाहर आये। ओसारेमें अुनकी पत्नी अेक युवतीको अपनी छातीसे लगाये अुसके आँसू पोंछ रही थीं। विजय देसाअीने जब यह दृश्य देखा तो वे बोले —"क्यों बेटा! तू क्यों रो रही है?"

रोती हुअी युवतीने आँचलसे आँसू पोंछते हुअे कहा — "कुछ नहीं, चाचाजी!"

यह युवती दिनकर देसाअीकी पुत्री पद्मा थी।

विजय देसाअीने आश्वासन-भरी वाणीमें कहा—"तू घबराती है। देसाअियोंका काम तो अैसे ही चलता है। कभी जब्ती भी आ जाती है।"

"लेकिन अिनके दहेजके गहने भी जब्त हो रहे हैं।" देसाअीकी पत्नीने कहा।

पद्माकी आँखें फिर डबडबा आयीं। दहेजमें मिले हुअे गहनोंकी अैसी दुर्दशा होते देख अुसकी छाती फटी जाती थी।

"बेटा, रोओ मत। किसकी मजाल है कि तेरे गहनोंको हाथ लगाये?" कहते हुअे देसाअीने चाबियोंका अेक गुच्छा पत्नीकी ओर फेंक दिया।

"अुस छोटी पेटीमें नोटोंका बंडल पड़ा है। जाकर अुसे निकाल लाओ।"

'देसाअिन' दौड़ी गयीं और नोटोंका अेक बंडल लेकर तुरन्त ही लौट आयी। देसाअीने वह बंडल पद्माको

दिया और आदेश-पूर्वक कहा—“ जाओ बेटी, अपने बापूको यह दे आओ । ”

पद्मा नोट लेकर घर दौड़ी गयी । लेकिन जितनी फुरतीसे वह गयी थी, अुतनी ही फुरतीसे लौट आयी ।

अुसने दुःख-भरे स्वरमें कहा—“ बापू लेनेसे अिनकार करते हैं, अुन्होंने नोट फेंक दिये । ”

विजय देसाअी अेकाअेक गरज अुठे—“ बड़ा लखपती है ! वनमाली सेठ ! ”

वनमाली सेठने खिड़कीकी राह देखा । विजय देसाअीने घुड़कीभरी आवाज़में कहा—“ अुतर नीचे, बेशरम कहींके ! तेरी यह हिम्मत कि बग़ैर मुझसे पूछे घरमें घुस गया ? ”

सेठने कहा—“ देसाअीजी, जब मैं आया, आप सामने ही बैठे थे ! ”

“ चल, सँभाल अपने पैसे और रास्ता नाप ! ब्याज-ही-ब्याजमें लोगोंको बरबाद कर डाला । हरामखोर कहींका ! ”

अिसी वक्त दिनकरलाल देसाअी लाल-पीले होते हुअे नीचे आये और विजयलालसे अुलझ पड़े—“ तू कौन होता है पैसे देनेवाला ! मेरी अिज्ज़त लेने बैठा है ? ”

“ रहने दे भाअी, रहने दे ! घरमें बैठ ! तेरी अिज्जत कितनी है, सो मैं जानता हूँ । ”

“ तुझसे किसने कहा था कि तू पैसे दे ? बलासे मेरा घर नीलाम हो जाय ! तेरा अिसमें क्या नुकसान है ? ”

“ तो तुझे दिये किसने हैं पैसे ? ”

"तो किसे दिये हैं ?"

"अपनी बेटीको दिये हैं। तू अुसके गहने ज़ब्त होने दे और मैं बैठा देखता रहूँ ?"

"बेटी ! पद्मा तेरी बेटी है ?"

"हाँ, मेरी बेटी है। सात नहीं, सत्तासी बार मेरी है। अकेले तेरी ही वह बेटी नहीं है। वह देसाअिओंकी बेटी है। सातों पीढ़ीकी बेटी है।"

"आखिर तू अपनी भाअीबन्दी जताकर ही रहा ! सबके सामने तूने मेरा पानी अुतार लिया।" यों बड़बड़ाते हुअे दिनकर देसाअी अपने हिंडोलेपर जा बैठे।

चाँदीके पानदानसे दो पान निकालकर अुन्होंने सुनहले चर्कसे दो बीड़े बाँधे और पद्माके हाथमें अेक बीड़ा देते हुअे कहा—"पद्मा जा दे आ अपने चाचाको।"

दोनों भाअी अिस तरह, प्रतिदिन बिना बोले बीड़ोंका आदान-प्रदान करते रहते थे। वे कितने ही क्यों न लड़े-भिड़े हों, मगर लड़ाअी-झगड़ेके बावजूद भी कोअी दिन अैसा न जाता था जब दिनकर देसाअीका बाँधा हुआ बीड़ा विजय देसाअीने न खाया हो।

तकियेका सहारा लेकर अपने पूर्वजोंके पराक्रमोंका सिंहावलोकन करते करते आज दिनकरलालके दिलमें अेक विचार फिर फिर आता रहता था—

विजय कैसा ही क्यों न हो, आखिर है तो वह देसाअी बच्चा न !

महेश

गाँवका नाम काशीपुर है। गाँव छोटा-सा है और वहाँके जमींदार और भी छोटे है। लेकिन फिर भी अुनके रोबके मारे कोअी प्रजा च्चूं तक नहीं कर सकती—अैसा अुनका प्रताप है।

आज अुनके छोटे लड़केकी बरस-गाँठकी पूजा थी। पूजाके सब काम समाप्त करके तर्करत्न महाशय दोपहरके समय अपने घर लौट रहे थे। वैशाखका प्रायः अन्त हो रहा था, लेकिन आकाशमें कहीं मेघकी छाया भी नहीं दिखाअी देती थी। अनावृष्टिके कारण आकाशसे मानो आग बरस रही थी।

सामने दिगन्त तक फैला हुआ मैदान जल-भुनकर खंड खंड हो रहा था और अुसकी लाखों दरारोंमेंसे पृथ्वीके कलेजेका रक्त निरन्तर धुँआ बनकर निकल रहा था। अग्नि शिखाकी तरह अुसकी सर्पिल अूर्ध्व-गतिकी ओर देखनेसे सिर चकरा जाता था, मानो अेक नशा-सा चढ़ आता था।

अिसकी सिवानपर जो रास्ता था, अुसी रास्तेके अेक किनारे गफूर जुलाहेका मकान था। अुस मकानकी मिट्टीकी चहारदीवारी आँगनमें गिरकर रास्तेके साथ मिल गयी थी

और अुसके अन्तःपुर का लज्जा सम्भ्रम पथिकोंकी करुणाके सामने आत्म समर्पण करके निश्चिन्त हो गया था।

रास्तेके पास ही अेक पेडकी छायाके नीचे खड़े होकर तर्करत्न महाशयने ज़ोरोंसे पुकारा—"अबे ओ गफूर! अरेमें है?"

अुसकी दस बरसकी लडकीने दरवाज़ेपर आकर कहा "अब्बाको बुलाते हैं? अुन्हें बुखार आया है।"

तर्क०—"बुखार! बुला ला अुस हरामजादेको। पाखंडी! म्लेच्छ!"

ये सब बातें सुनकर गफूर बाहर निकला और मारे बुखारके काँपता हुआ अुनके पास आ खड़ा हुआ। टूटी हुअी चहारदीवारीके साथ ही बबूलका अेक पुराना पेड़ सटा हुआ खड़ा था, जिसकी डालमें अेक बैल बँधा हुआ था। तर्करत्नने अुसीकी ओर दिखलाते हुअे कहा—"भला बतलाओ तो, यह सब क्या हो रहा है? यह जानते हो कि यह हिन्दुओंका गाँव है और यहाँके जमींदार ब्राह्मण है!"

तर्करत्नका मुख मारे क्रोध और धूपके लाल हो रहा था; अिस लिये अुसमेंसे जो वाक्य निकलते थे, वे भी तप्त और अंगारेकी ही तरह होते थे। लेकिन बेचारे गफूरकी समझमें अिसका कुछ भी मतलब नहीं आ रहा था, अिसलिये वह चुपचाप अुनका मुँह ही ताकता रहा।

तर्करत्नने कहा—"सवेरे जानेके समय मैं देख गया था कि यह बैल यहीं बँधा था, और अब दोपहरके समय

लौटनेपर भी देख रहा हूँ कि यह ज्यों-का-त्यों यहीं बँधा है। अगर कहीं गो-हत्या हो गयी तो मालिक तुम्हें जीते-जी कब्रमें गाड़ देंगे। वह अैसे वैसे ब्राह्मण नहीं हैं।"

गफूरने कहा—"महाराज, क्या करूँ, मैं बहुत ही लाचारीमें पड़ गया हूँ। मुझे कअी दिनसे बुखार आ रहा है। मैं चाहता हूँ कि अिसका पगहा पकड़कर अिसे कहीं ले जाकर जरा चरा लाअूँ! लेकिन सिरमें अैसा चक्कर आ रहा है कि गिर गिर पड़ता हूँ।"

तर्क॰—"तो फिर अिसे खोल दो। यह आप ही जाकर चर आयेगा।"

गफूर—"महाराज, मैं अिसे कहाँ छोड़ूँ? अभी लोगोंके धानकी दँवरी नहीं हुअी है। अपना पुआल भी लोगोंने खलिहानसे नहीं हटाया है। मैदानकी सारी घास जल गयी है। कहीं अेक मुट्ठी घास नहीं है। कहीं किसीके धानमें मुँह डालेगा तो कहीं किसीकी राशिमेंसे खाने लगेगा। अब भला महाराज, मैं अिसे कैसे छोड़ सकता हूँ!"

तर्करत्नने कुछ नरम होकर कहा—"अगर तुम अिसे नहीं छोड़ सकते हो तो कहीं ठंढेमें ही अिसे बाँध दो और दो आँटी पुआल ही अिसके आगे डाल दो। तब तक वही चबायेगा। तुम्हारी लड़कीने अभी भात नहीं बनाया है? जरा-सा माँड ही अिसके आगे रख दो। वही पीये।"

लेकिन गफ़ूरने कोअी जवाब नहीं दिया। अुसने निरुपायोंकी भाँति अेक बार तर्करत्नके मुँहकी ओर देखा और तब स्वयं अुसके मुखसे केवल अेक दीर्घ निश्वास निकला।

तर्करत्नने कहा—"मालूम होता है कि वह भी नहीं है। आखिर तुमने अपना धान क्या किया? तुम्हें हिस्सेमें जो कुछ मिला था वह सब बेचकर पेटाय नमः कर डाला? गोरूके लिये अेक आँटी भी बचाकर न रखी? कसाअी कहींका!"

यह निष्ठुर अभियोग सुनकर गफ़ूरकी मानो बोलती ही बन्द हो गयी। थोड़ी देर बाद अुसने धीरे धीरे कहा—"जो पन्द्रह-सोलह मन धान अिस बार हिस्सेमें मिला था, वह भी पिछले सालके बकाया लगानमें मालिकने ले लिया। मैंने बहुत रो-धोकर और हाथ-पैर जोड़कर कहा कि बाबूजी आप हाकिम ठहरे, आपका राज छोड़कर मैं कहाँ जाअूँगा, और कुछ नहीं तो चार मन पुआल ही मुझे दे दो। छप्पर-पर फूस तक नहीं है। खाली अेक कोठरी है। अुसीमें बाप-बेटी दोनों रहते हैं। और कुछ नहीं होगा तो ताड़के पत्तोंसे ही अुसे छाकर यह बरसात किसी तरह बिता दूँगा। लेकिन खानेको कुछ न मिलेगा तो मेरा महेश मर जायगा।"

तर्करत्नने हँसते हुअे कहा—"वाह! बड़े शौकसे अिसका नाम रखा गया है महेश! मेरा तो मारे हँसीके दम निकला जाता है।"

लेकिन यह हँसी गफूरके कानोंमें नहीं पहुँची। वह कहने लगा—"लेकिन मालिककी मुझपर दया नहीं हुअी। अुन्होंने सिर्फ दो महीने खाने-भरको धान मुझे दिया और बाकी सब अपने खत्तीमें भरवा लिया। हमलोगोंको अुसमें अेक तिनका भी नहीं मिला।"

अितना कहते कहते गफूरका कंठ-स्वर आँसुओंके भारसे भारी हो गया; लेकिन तर्करत्नके मनमें अितनेपर भी करुणाका अुदय नहीं हुआ। अुन्होंने कहा—"तुम भी खूब मजेके आदमी हो। अुनका खाकर बैठे हो, दोगे नहीं? जमींदार क्या तुम्हें अपने घरके खिलायेंगे? तुमलोग-तो राम-राज्य में रहते हो। नीच जाति हो कि नहीं, अिसी-लिये अुनकी निन्दा करनेमे ही मरे जाते हो।"

गफूरने लज्जित होकर कहा—"महाराज, भला मैं अुनकी निन्दा क्यों करने लगा! हमलोग अुनकी निन्दा तो नहीं करते; लेकिन आप ही बतलाअिये कि मैं दूँ कहाँ से। कोअी चार बीघे जमीन है। अुसी सीरमें खेती करता हूँ। लेकिन अिधर लगातार दो बरससे कुछ भी पैदावार नहीं हुअी। खेतका धान खेतमें ही सूख गया। यहाँ बाप-बेटीको दोनों समय पेट-भर खाने तकको नहीं मिलता। जरा घरकी तरफ देखिये। पानी-बूँदीमें लड़कीको लेकर अेक कोनेमें बैठा बैठा रात बिता देता हूँ। पैर फैलाकर सोने तक की जगह नहीं मिलती। जरा अिस महेशको ही देखिये। अिसकी हड्डी-पसलियाँ तक गिन्री

जा सकती हैं। महाराज, आप ही दो मन धान अुधार दे दीजिये। जरा गोरूको भी दो-चार दिन भर-पेट खिलाअूँ।"

अितना कहता हुआ गफूर झटसे हाथ जोड़कर ब्राह्मणके पैरोंके पास बैठ गया। तर्करत्न तीरकी तरह दो कदम पीछे खिसक गये और बोले—"मर कम्बख्त, क्या मुझे छू ही लेगा?"

गफूर—"नहीं महाराज, मैं छूने क्यों लगा? छुअूँगा नहीं। लेकिन अिस समय मुझे दो मन धान दे दो। अुस दिन मैं आपके यहाँ चार-चार राशियाँ देख आया हूँ। मुझे मन-दो मन देनेसे आपको कुछ पता भी न चलेगा कि किसीको कुछ दिया है। अगर हमलोग भूखों भी मर जायँ, तो कोअी हर्ज नहीं। लेकिन यह बेचारा बे-ज़बान जानवर है। मुँहसे कुछ कह भी नहीं सकता, चुपचाप खड़ा-खड़ा देखता रहता है और अिसकी आँखोंसे पानी गिरता है।"

तर्करत्नने कहा—"तुम अुधार माँगते हो न? लेकिन यह तो बतलाओ कि यह अुधार चुकाओगे कैसे?"

गफूर आशान्वित होकर व्यग्र स्वरसे कहने लगा—"महाराज, जिस तरहसे होगा, मैं चुका दूँगा। आपके साथ धोखेबाजी नहीं करूँगा।"

तर्करत्नने मुखसे अेक प्रकारका शब्द करके गफूरके व्याकुल स्वरका अनुकरण करते हुअे और मानो अुसका मुँह चिढ़ाते हुअे कहा—"धोखेबाजी नहीं करूँगा। जिस

तरहसे होगा चुका दूँगा ! तुम बड़े चालाक हो। चल हट, रास्ता छोड़। मैं घर जाऊँ; दिन ढलने लगा है।"

अितना कहकर तर्करत्न मुँह बिचकाकर मुस्कराते हुअे आगे बढ़े; लेकिन तुरन्त ही डरकर पीछे हटे और बिगड़कर बोले—"कम्बख्त कहींका ! यह तो सींग हिलाता हुआ आगे बढ़ रहा है। कहीं मारेगा तो नहीं ?"

गफूर अुठकर खड़ा हो गया। ब्राह्मणके हाथमें फल-मूल और भीगे चावलोंकी पोटली थी। वही पोटली बैलको दिखलाते हुअे अुन्होंने कहा—"अिसीकी महक लगी है। अिसीमेंसे मुट्ठी-भर खाना चाहता है। खाना चाहता है ? हो सकता है। जैसा खेतिहर है, वैसा ही अुसका बैल भी ठहरा। भूसा तक तो खानेको नहीं मिलता और खाना चाहता है चावल और केला। चलो, अिसे रास्तेमेंसे हटाकर बाँधो। अिसके अैसे सींग हैं कि मालूम होता है कि किसी दिन किसीका खून ही कर डालेगा।"

अितना कहते हुअे तर्करत्न महाशय कुछ कतराकर वहाँसे जल्दी जल्दी पैर बढ़ाते हुअे चले गये।

गफूर अुस ओरसे दृष्टि हटाकर कुछ देर तक चुपचाप महेशके मुखकी ओर देखता रहा। अुसके घने गहरे काले दोनों नेत्र वेदना और क्षुधासे भरे हुअे थे। गफूरने अुससे कहा—"तुम्हें अुन्होंने अेक मुट्ठी भी न दिया ? अुनके पास है तो बहुत-सा; लेकिन फिर भी वह किसीको नहीं देते। जाने दो, न दें।"

अितना कहते कहते गफूरका गला भर आया और अिसके बाद अुसकी आँखोंसे टप टप आँसू बहने लगे। अुसने महेशके और भी पास पहुँचकर अुसके गले, सिर और पीठपर हाथ फेरते हुअे धीरे धीरे कहना आरम्भ किया, " महेश, तुम मेरे बेटे हो। तुम आठ बरस तक हमलोगोंका प्रतिपालन करके बुड्ढे हुअे हो। लेकिन फिर भी मैं तुम्हें पेट-भर खानेको नहीं दे सकता। लेकिन तुम यह तो जानते ही हो कि मैं तुम्हें कितना अधिक चाहता हूँ!"

अिसके अुत्तरमें महेश केवल अपनी गरदन आगे बढ़ाकर चुपचाप आँखें बन्द करके खड़ा रहा। गफूरने अपनी आँखोंका जल अुस बैलकी पीठपर गिराकर और तब अुसे पोंछकर फिर अुसी प्रकार अस्फुट स्वरमें कहना आरम्भ किया—" ज़मींदारने तुम्हारे मुँहका कौर छीन लिया। श्मशानके पास गाँवकी जो थोड़ीसी चराअीकी ज़मीन थी, अुसका भी अुन्होंने पैसेके लोभसे बन्दोबस्त कर दिया। अब तुम्हीं बतलाओ कि अिस अकालके समय मै तुम्हें किस तरह खिलाकर जीता रखूँ? अगर मैं तुम्हें छोड़ दूँ तो तुम जाकर दूसरोंकी राशिमेंसे खाने लगोगे—लोगोंके केलोंके पेड़पर मुँह मारने लगोगे। अब मै तुम्हारे लिये क्या करूँ? अब तुम्हारे शरीरमें बल नहीं है, यहाँ कोअी तुम्हें लेना नहीं चाहता। लोग तुम्हे गौ-हट्टेमें ले जाकर बेच देनेके लिये कहते हैं।"

मन-ही-मन यह बात कहते कहते अुसकी आँखोंसे फिर टप टप आँसू बहने लगे। अिसके बाद अुसने अपनी टूटी

हुअी झोंपड़ीके पिछवाड़ेसे थोड़ा-सा पुराना और विवर्ण खर लाकर अुसके मुँहके आगे रख दिया और धीरेसे कहा—"लो भअिया, जल्दीसे थोड़ा-सा खा लो। देर होनेसे फिर...."

अितनेमें अुसकी लड़कीने पुकारा—"अब्बा!"

"क्या है बेटी?"

"आओ, भात खा लो।"

अितना कहकर अमीना घरसे निकलकर बाहर दरवाजे पर आ खड़ी हुअी। क्षण ही भरमें अुसने सब कुछ देखकर कहा—"क्यों अब्बा, तुमने फिर महेशको छप्परमेसे निकाल कर रख दिया है?"

गफूरके मनमें पहलेसे ठीक यही भय हो रहा था। अुसने कुछ लज्जित होकर कहा—"बेटी, पुराना सड़ा हुआ खर था। वह आप ही गिरा जा रहा था...."

"अब्बा, मै अन्दरसे सुन रही थी। अभी अभी तो तुमने खींचकर निकाला है।"

"नहीं बेटी, मैंने खींचा नहीं, बल्कि...."

"लेकिन अब्बा, दीवार जो गिर जायगी।"

गफूर चुप रह गया। यह बात स्वयं अुससे बढ़कर और कौन जानता था कि अेक अिस छोटे-से घरको छोड़कर और अुसका सब कुछ चला गया है और अिस तरह करनेसे अगली बरसातमें यह भी न रह जायगा। फिर अिस तरह करनेसे भी आखिर कितने दिन तक काम चल सकता था!

लड़कीने कहा--" अब्बा, हाथ धोकर आओ और भात खा लो। मैं परोसे देती हूँ।"

गफूर ने कहा--" बेटी, ज़रा माँड़ मुझे दे दो, पहले अिसे पिला दूँ तो चलूँ।"

"अब्बा, माँड़ तो आज नहीं है। वह तो हाँड़ीमें ही सूख गया।"

"माँड़ भी नहीं है?" गफूर चुप हो रहा। यह बात अुस दस बरसकी लड़कीकी समझमें भी आ गयी थी कि विपत्तिके दिनोंमें ज़रा-सी चीज़ भी नष्ट नहीं की जानी चाहिये। वह हाथ धोकर कोठरीके अन्दर जा खड़ा हुआ। पीतलकी अेक थालीमें पिताके लिये शाकान्न सजाकर कन्याने स्वयं अपने लिये मिट्टीकी अेक सनहकीमें थोड़ा-सा भात परोस लिया था। कुछ देर तक देखनेके बाद गफूरने धीरे धीरे कहा—" बेटी अमीना, मुझे फिर जाड़ा मालूम हो रहा है। बुखारकी हालतमें खाना क्या अच्छा होगा?"

अमीनाने अुद्विग्न होकर कहा—" लेकिन अुस वक्त तो तुमने कहा था कि वहुत भूख लगी है।"

" अुस वक्त? अुस वक्त बेटी, शायद बुखार नहीं था।"

" अच्छा, तो फिर अुठाकर रखे देती हूँ। शामको खा लेना।"

गफूरने सिर हिलाकर कहा—" लेकिन बेटी अमीना बासी भात खानेसे तो बीमारी और बढ़ जायगी।"

अमीनाने पूछा—" तो फिर?"

गफूरने न मालूम क्या सोचकर सहसा अिस समस्याकी अेक मीमांसा कर डाली। असने कहा—"बेटी अेक काम करो। न हो तो यह भात जाकर महेशके ही आगे रख आओ। क्यों अमीना, रातको मुझे अेक मुट्ठी भात न पका दोगी?"

अुत्तरमें अमीनाने सिर अुठाकर कुछ देर तक चुपचाप पिताके मुंहकी ओर देखा और तब सिर झुकाकर धीरे धीरे गरदन हिलाकर कहा—"हाँ अच्छा, पका दूँगी।"

गफूरका चेहरा तमक अुठा। पिता और कन्याके बीचमें जो यह छलनका थोड़ा-सा अभिनय हो गया था, अुसे अिन दोनोंके सिवाय शायद अेक और कोअी अन्तरिक्षसे देख रहा था।

२

अिसके पांच सात दिन बाद बीमार गफूर अेक रोज़ चिन्तित भावसे दरवाजेपर बैठा हुआ था। अुसका महेश कलसे अभी तक लौटकर घर नहीं आया था। स्वयं अुसके शरीरमें तो शक्ति थी ही नहीं, अिसलिये सबेरेसे अमीना ही अुसे चारों तरफ़ ढूँढती फिरती थी। दोपहरके बाद वह लौट आयी और बोली—"अब्बा, सुनते हो, माणिक घोषने महेशको थानेमें भेज दिया है।"

" गफूरने कहा—"दुत् पगली!"

"नहीं अब्बा, मै ठीक कहती हूँ। अुनके नौकरने कहा कि अपने अब्बासे जाकर कह दो कि दरियापुरके कानीहौसमें जाकर ढूंढें।"

"अुसने क्या किया था?"

"अुनके बागमें घुसकर अुसने वहांके पेड़-पौधे खराब कर डाले थे।"

गफूर स्तब्ध होकर बैठा रहा। अुसने अब तक मन-ही-मन महेशके सम्बन्धमें अनेक प्रकारकी दुर्घटनाओंकी कल्पना की थी; लेकिन यह आशंका अुसे नहीं हुअी थी। वह जैसा निरीह था, वैसा ही गरीब भी था; अिसीलिये अुसे अिस बातका भी भय नहीं हुआ था कि मेरा कोअी पड़ोसी मुझे अितना बड़ा दंड भी दे सकता है, और विशेषतः माणिक घोष! अिस प्रान्तमें तो वह अपनी गो-ब्राह्मण-भक्तिके लिये प्रसिद्ध था।

लड़कीने कहा—"अब्बा, दिन ढल रहा है। तुम महेशको लानेके लिये नहीं जाओगे?"

गफूर ने कहा—"नहीं।"

"लेकिन अुन लोगोंने तो कहा था कि अगर तीन दिन तक कोअी अुसे लेने नहीं जायगा तो पुलिसवाले अुसे गौ-हट्टेमें बेच डालेंगे।"

गफूरने कहा—"बेच डालें।"

अमीना यह तो नहीं जानती थी कि गौ-हट्टा असलमें क्या चीज है; लेकिन वह अनेक बार अवश्य देख चुकी थी कि जब कभी महेशके बारेमें गौ-हट्टेका जिक्र आता था, तो अुसका पिता बहुत अधिक विचलित हो जाता

था; लेकिन आज गौ-हट्टका नाम सुनकर भी अुसका पिता चुपचाप वहाँसे अन्दर चला गया था।

जब रात हो गयी और चारों तरफ अँधेरा छा गया, तब गफूर चोरीसे वंशीकी दूकानपर पहुँचा और अुससे कहने लगा—"चाचा, तुम्हे अेक रुपया देना होगा।"

यह कहकर गफूरने अपनी पीतलकी थाली वंशीके बैठनेकी मचियाके नीचे रख दी। अुस थालीकी तौल वगैरह वंशी बहुत अच्छी तरह जानता था। अिधर दो बरसोंके बीचमे अुसने थाली अपने पास रेहन रखकर कोअी पाँच बार अुसे अेक अेक रुपया अुधार दिया था। अिसीलिये आज भी अुसने कोअी आपत्ति नहीं की।

दूसरे दिन महेश फिर अपनी जगहपर दिखाअी देने लगा। वही बबूलका पेड़, वही पगहा, वही खूँटा, वही तृणहीन शून्य आधार और वही क्षुधातुर काले नेत्रोंकी सजल अुत्सुक दृष्टि। अेक बुड्ढा मुसलमान बहुत ही तीव्र दृष्टिसे अुसका नीरीक्षण कर रहा था। पास ही अेक तरफ दोनों घुटने सटाकर गफूर चुपचाप बैठा हुआ था। भली भाँति परीक्षा कर चुकनेके बाद अुस बुड्ढे मुसलमानने अपनी चादरके पल्लेमेसे दस रुपयेका अेक नोट निकाला और अुसकी तह खोलकर और कअी बार अुसे मसलकर अन्तमे गफूरके पास पहुँचकर कहा—"अब मै अिसे भुनाने नहीं जाअूँगा। लो, पूरा पूरा ले लो।"

गफूरने हाथ बढाकर वह नोट ले लिया और चुपचाप ज्यों-का-त्यों वहीं बैठा रहा। अुस बुड्ढेके साथ जो और दो आदमी आये थे, वे ज्योंही बैलका पगहा खोलनेका अुद्योग करने लगे, त्योंही वह अचानक अुठकर सीधा खड़ा हो गया और अुद्धृत स्वरसे बोल अुठा—" खबरदार! कहे देता हूँ, पगहेमें हाथ मत लगाना; नहीं तो अच्छा न होगा।"

वे लोग भी चौंक पड़े। बुड्ढेने चकित होकर पूछा—" क्यों ?"

गफूरने फिर अुसी प्रकार बिगड़कर जवाब दिया–"क्यों और क्या! मेरी चीज है, मै नहीं बेचूँगा। मेरी खुशी।"

यह कहकर गफूरने नोट दूर फेंक दिया।

अुन लोगोंने कहा—" कल तो रास्तेमें तुम बयाना ले आये थे।"

" यह लो, अपना बयाना वापस लो।"

यह कहकर गफूरने कमरमेंसे दो रुपये निकालकर झनसे दूर फेंक दिये। जब अुस बुड्ढेने देखा कि अेक झगड़ा होना चाहता है, तब अुसने हँसते हुअे धीर भावसे कहा—" अिस तरह चाँप चढ़ाकर दो रुपये और ले लेंगे। बस यही न ? दे दो जी, लड़कीके हाथमें मिठाअी खानेके लिये दो रुपये और दे दो। क्यों यही न ?"

" नहीं।"

" लेकिन यह भी जानते हो कि अिससे ज्यादा अेक अधेला भी कोअी न देगा ?"

गफ़ुरने खूब ज़ोरसे सिर हिलाकर कहा—" नहीं।"

बुड्ढेने कुछ नाराज़ होकर कहा—" और नहीं तो क्या! अिसके चमड़ेका ही जो कुछ दाम वसूल होगा, वह होगा। और नहीं तो और माल है ही क्या?"

तोबा! तोबा! गफूरके मुँहसे सहसा अेक गन्दी बात निकल गयी। वह तुरन्त ही दौड़कर अपने घरके अन्दर जा छिपा और वहींसे चिल्लाकर अुन लोगोंको डराने लगा कि अगर तुमलोग तुरन्त ही अिस गाँवसे चले नहीं जाओगे तो मै अभी ज़मींदारको बुलवा भेजूँगा और तुमलोगोंको जूतेसे पिटवाकर छोड़ूँगा।

यह बखेड़ा देखकर वे सब लोग चले गये। लेकिन कुछ ही देर बाद ज़मींदारकी कचहरीमें अुसकी बुलाहट हुअी। गफूरने समझ लिया कि यह बात मालिकके कानों तक पहुँच गयी।

ज़मींदारकी कचहरीमें अच्छे-बुरे सभी तरहके बहुत-से लोग बैठे हुअे थे। शिब्बू बाबूने लाल लाल आँखें करके कहा—"क्यों बे गफूर, मेरी तो समझमें ही नहीं आता कि आज मैं तुझे क्या सजा दूँ? तू जानता है कि तू कहाँ रहता है?"

गफूरने हाथ जोड़कर कहा—" जी हाँ, जानता हूँ। हमलोगोंको तो भर-पेट खानेको भी नहीं मिलता। और नहीं तो आज आप मुझे जो कुछ जुरमाना करते, वह दे देता और कभी 'नहीं' न करता।

सभी लोग बहुत विस्मित हुअे। सब लोग यही समझते थे कि गफूर बहुत ही जिद्दी और बहुत बड़ा बद-मिजाज है। अुसे रुलाअी आने लगी और अुसने कहा—“ सरकार, अब मैं अैसा काम कभी न करूँगा।”

अितना कहकर गफूरने स्वयं ही अपने हाथोंसे अपने दोनों कान पकड़े और आँगनके अेक सिरेसे दूसरे सिरे तक नाक रगड़ता हुआ चला गया और तब फिर अुठकर खड़ा हो गया।

शिव्बू बाबूने सदय स्वरसे कहा—“ अच्छा जा, जा। हो गया। देख, अब कभी अिस तरहकी बात भी खयालमें मत लाना।”

यह हाल सुनकर सभी लोग मारे आनन्दके पुलकित हो गये। किसीके मनमें अिस बातका तनिक भी सन्देह न रह गया कि यह महापातक केवल ज़मीदारके पुण्य-प्रभाव और शासन-भयसे ही निवारित हुआ है। तर्करत्न महाशय भी वहाँ अुपस्थित थे। अुन्होंने ‘ गो ’ शब्द की शास्त्रीय व्याख्या कर सुनायी और जिस उद्देशसे अिस धर्म-ज्ञान-हीन म्लेच्छ जातिके लिये गाँवकी सीमाके अन्दर बसानेका निषेध किया गया है, वह अुद्देश भी सब लोगोंको बतला दिया; और अिस प्रकार अुन्होने मानो सब लोगोंके ज्ञान-नेत्र विकसित कर दिये !

गफूरने किसीकी अेक बातका भी कोअी अुत्तर नहीं दिया। अुसने समझ लिया कि यहाँ मेरा जितना अपमान और

तिरस्कार हुआ है, वस्तुतः मैं अुसका पात्र था और वह मेरा प्राप्य था; और अिसीलिये वह सारा अपमान और सारा तिरस्कार शिरोधार्य करके प्रसन्न-चित्त होकर घर लौट आया। अुसने अपने पड़ोसियोंके यहाँसे माँड़ माँगकर महेशको पिलाया और वह अुसके शरीर, मस्तक तथा सींगोंपर बार बार हाथ फेरकर अस्फुट स्वरमें न जाने कितनी ही बातें कहने लगा।

३

ज्येष्ठ मास समाप्तिपर आ रहा था। आजके आकाशकी तरफ बिना देखे ही अिस बातका पता लग सकता था कि धूपकी जिस मूर्तिने अेक दिन वैशाखके अन्तमें आत्म-प्रकाश किया था, वह कितनी अधिक भीषण और कितनी अधिक कठोर हो सकती है। करुणाका कहीं आभास तक नहीं दिखाअी देता। आज मानो यह बात सोचते हुअे भी डर लगता था कि कभी अिस रूपमें लेश-मात्र भी परिवर्तन हो सकता है और किसी दिन यह आकाश मेघके कारण स्निग्ध और सजल भी दिखाअी दे सकता है। अैसा जान पड़ता था कि जो अग्नि समस्त नभःस्थलमें व्याप्त होकर धधक रही है, अुसका कहीं अन्त और कहीं समाप्ति नहीं है, और अन्तमें जब तक सब कुछ दग्ध न हो जायगा, तब तक अिस आगका धधकना बन्द न होगा।

अैसे ही अेक दिन दोपहरके समय गफूर लौटकर अपने घर आया। दूसरेके दरवाजेपर जाकर मेहनत-मजदूरी

क़रनेकी अुसकी आदत नहीं थी, और तिसपर अभी चार ही पाँच दिन पहले अुसे बुखारने छोड़ा था। अुसका शरीर जितना ही दुर्बल था, अुतना ही श्रान्त भी था, तो भी वह आज काम ढूँढ़नेके लिये ही घरसे निकला था। किन्तु केवल यह प्रचंड धूप ही अुसके सिरपर जाकर पड़ी थी, अिसके सिवा और कोअी फल नहीं हुआ था। मारे भूख, प्यास और थकावटके अुसकी आँखोंके आगे अँधेरा छा रहा था। आँगनमें खड़े होकर अुसने पुकारा—" अमीना, भात बन गया ? "

लड़की अन्दरसे निकलकर बाहर आयी और बिना कोअी अुत्तर दिये चुपचाप खड़ी हो गयी।

कोअी अुत्तर न पाकर गफूरने फिर चिल्लाकर पूछा—" अरे, भात बना है ? क्या कहा ? नहीं बना ? क्यों नहीं बना ? "

" अब्बा, घरमें चावल नहीं है। "

" चावल नहीं है ? तो फिर सबेरे मुझसे क्यों नहीं कहा ? "

" मैंने तो रातको ही तुमसे कह दिया था। "

गफूरने अुसका मुहँ चिढ़ाते हुअे और अुसके कंठ-स्वरका अनुकरण करते हुअे कहा—" रातको ही कह दिया था ! रातकी कही हुअी बात किसीको याद रहती है ? "

स्वयं अुसके कर्कश कंठके कारण अुसका क्रोध और भी दूना हो गया था। अुसने अपना मुँह और भी अधिक बिगाड़कर कहा—“चावल बचेगा कहाँसे ? बीमार बुड्ढा बाप चाहे खाय और चाहे न खाय, लेकिन जवान लड़कीको तो चार चार, पाँच पाँच बार भात खानेको चाहिये ! अब आगेसे मैं चावल तालेमें बन्द करके रखा करूँगा। लाओ, अेक लोटा पानी दो। प्यासके मारे कलेजा फटा जा रहा है। कह दो, वह भी नहीं है।”

अमीना अब भी पहलेकी तरह चुपचाप सिर झुकाये खड़ी रही। थोड़ी देर तक प्रतीक्षा करनेके बाद जब गफूरने समझ लिया कि घरमें प्यास बुझानेके लिये पानी भी नहीं है, तब वह अपने आपको रोक न सका। अुसने जल्दीसे आगे बढ़कर और अमीनाके गालपर तड़से अेक थप्पड़ जड़कर कहा—“मुँहजली, हरामजादी, दिन-भर तू क्या करती है ? दुनियामें अितने आदमी मरते हैं, लेकिन तुझे मौत नहीं आती।”

लड़कीने कुछ भी अुत्तर नहीं दिया। वह मिटटीका खाली घड़ा अुठाकर अपनी आँखें पोंछती हुआी अुसी तेज़ धूपमें निकल पड़ी। लेकिन अुन आँखोंकी ओटसे ही मानो अेक तीर आकर गफूरके कलेजेमें लगा। अुसकी माके मर जानेपर अिस लड़कीको जिस तरह अुसने पाल-पोसकर बड़ा किया था, अुसका हाल सिर्फ वही जानता था। अुस समय अुसे ध्यान हुआ कि मेरी अिस स्नेहशीला कर्मपरायण और

शान्त कन्याका कुछ भी दोष नहीं है। खेतमेंसे जो थोड़ा-सा अन्न आया था, वह जबसे समाप्त हो गया है, तबसे हम लोगोंको दोनों समय भर-पेट अन्न ही नहीं मिलता। किसी दिन अेक बार भोजन होता है और किसी दिन वह भी नहीं। दिनमें पाँच-छ बार जिस प्रकार भात खाना असम्भव है अुसी प्रकार मिथ्या भी है। और प्यास बुझानेके लिये जल न होनेका कारण भी अुसे अविदित नहीं था। गाँवमें जो दो-तीन ताल थे, वे सब अेकदमसे सूख गये थे। शिवचरण बाबूके मकानके पास जो ताल था, अुसका पानी सब लोगोंको नहीं मिल सकता था। अन्यान्य जलाशयोंके बीचमें जो दो अेक गड्ढे खोदकर थोडा बहुत जल संचित किया जाता था, अुसके लिये जितनी ही छीना-झपटी होती थी, अुतनी ही अुसके पास भीड़ भी होती थी। और विशेषतः मुसलमान होनेके कारण तो यह लड़की अुन गड्ढोंके पास भी नहीं पहुँच सकती थी। घंटों दूर खड़े रहनेपर और लोगोंसे बहुत कुछ अनुनय-विनय करनेपर जब कोअी दया करके अुसके बरतनमें थोड़ा-सा जल डाल देता था, तब वही जल लेकर वह घर लौट आया करती थी। ये सभी बातें गफूर जानता था। हो सकता है कि आज वहाँ जल रहा ही न हो, या अपनी छीना-झपटीमे किसीको अुस लड़कीपर दया करनेका अवसर ही न मिला हो। गफूरने समझ लिया कि अवश्य ही आज किसी तरहकी कोअी बात हुअी होगी। यही बात ध्यानमें आनेके कारण अुसकी आँखोंमें भी जल

भर आया । ठीक अिसी समय जमींदारका प्यादा यमदूतकी तरह आकर आँगनमें खड़ा हो गया और चिल्लाकर पुकारने लगा—"अे गफूर, घरमें हो?"

गफूरने कुछ तिक्त स्वरसे अुत्तर दिया—"हाँ, क्या है?"

"बाबूजी बुलाते हैं, चलो।"

गफूरने कहा—"अभी मैंने कुछ खाया-पिया नहीं है; थोड़ी देरमें आअूँगा।"

गफूरकी अितनी बड़ी गुस्ताखी प्यादा बरदाश्त न कर सका! अुसने अेक कुत्सित सम्बोधन करके कहा—बाबूजीका हुकुम है कि जूते मारते हुअे घसीटकर ले आओ।"

गफूर फिर दोबारा आत्म-विस्मृत हुआ। अुसने भी कुछ दुर्वाक्यका अुच्चारण करके कहा—"मलकाके राज्यमें कोअी किसीका गुलाम नहीं है। मैं लगान देकर यहाँ बसता हूँ। मै नहीं जाअूँगा।"

लेकिन संसारमें अैसे क्षुद्र व्यक्तिकी अितनी बड़ी दुहाअी देना केवल अनुचित ही नहीं होता, बल्कि विपत्तिका भी कारण होता है। खैरियत यही थी कि अितना क्षीण स्वर अुतने बड़े कानों तक जाकर पहुँचा नहीं था; नहीं तो अुसके मुँहके अन्न और आँखोंकी नींदका कहीं ठिकाना ही न रह जाता। अिसके बाद जो कुछ हुआ, वह विस्तारपूर्वक बतलानेकी आवश्यकता नहीं। लेकिन अिसके कोअी घण्टे भर बाद जब वह ज़मींदारकी कचहरीसे लौटकर घर आया

था, तब अुसका मुँह और आँखें सूजी हुअी थीं। अुसके अितने बड़े दंडका कारण मुख्यतः महेश था। सबेरे गफूर जब घरसे चला गया था, तब महेश भी पगहा तुड़ाकर बाहर निकल पड़ा था और ज़मींदारके आँगनमें घुसकर अुसने वहाँके फूलोंके कअी पौधे खा डाले थे और जो धान वहाँ सूख रहा था, अुसे तितर बितर और नष्ट-भ्रष्ट कर दिया था। और अन्तमें जब लोगोंने अुसे पकड़ना चाहा था, तब वह बाबू साहबकी छोटी लड़कीको ज़मीनपर पटककर भाग आया था।

अिस प्रकारकी यह कोअी पहली घटना नहीं थी। अिससे पहले भी कअी बार अैसी ही घटनाअें हो चुकी थीं। लेकिन पहले अुसे सिर्फ गरीब समझकर माफ कर दिया गया था। अगर वह अिस बार भी पहलेकी ही तरह आकर हाथ-पैर जोड़ता तो अुसे माफ कर दिया जाता; लेकिन अुसने जो प्यादेसे यह कह दिया था कि मै लगान देकर बसता हूँ और किसीका गुलाम नहीं हूँ, वही अुसकी दुर्दशाका कारण हुआ था। प्रजाके मुँहसे अितनी बड़ी गुस्ताखीकी बात सुनकर शिवचरण बाबू किसी तरह बरदाश्त न कर सके थे। वहाँके प्रहार और लांछनाका गफूरने कुछ भी प्रतिवाद नहीं किया था और अपना मुँह बन्द किये था। घर आकर भी वह अुसी तरह चुपचाप पड़ गया। भूख और प्यासका तो अुसे कुछ भी ध्यान नहीं रह गया था; लेकिन अुसका अन्तःकरण बाहरके दोपहरके आकाशकी ही तरह

जल रहा था। कितना समय बीत गया; लेकिन जब आँगनमेंसे अचानक अुसे अपनी कन्याका आर्त स्वर सुनाअी पड़ा तब वह जल्दीसे अुठकर खड़ा हो गया और दौड़ा हुआ बाहर निकल आया। वहाँ आकर अुसने देखा कि अमीना जमीनपर गिरी हुअी है, अुसका घडा फूट गया है और अुसमेंका जल अिधर-अुधर बह रहा है। और महेश जमीनपर मुँह लगाकर वह जल पी रहा है। पलक भी झपकने नहीं पायी थी कि गफूर आपेसे बाहर हो गया। मरम्मत करनेके लिये कल ही अुसने अपने हलकी मुठिया निकाली थी। वही मुठिया अुसने दोनों हाथोंसे पकड़कर महेशके अवनत मस्तकपर जोरसे आघात किया।

महेशने सिर्फ अेक ही बार सिर अूपर अुठानेकी चेष्टा की और अिसके बाद अुसका अनाहारसे क्लिष्ट और जीर्ण-शीर्ण शरीर ज़मीनपर लोटने लगा। अुसकी आँखोंके कोनोंसे आसुओंकी कुछ बूँदे भी अुसके कानोंपरसे बह निकलीं, और अुसके सिरसे खूनकी भी कुछ बूँदें निकलीं। दो बार अुसका सारा शरीर थर थर करके काँप अुठा और अिसके बाद अगले और पिछले पैर जितनी दूर तक फैल सकते थे, अुतनी दूर तक अुन्हें पसारकर महेशने अन्तिम निःश्वासका त्याग किया।

अमीनाने रोते हुअे कहा--"अरे अब्बा, यह तुमने क्या किया? हमारा महेश तो मर गया!"

गफूर न तो अपनी जगहसे हिला और न अुसने कोअी अुत्तर ही दिया। वह अपने निर्निमेष नेत्रोंसे अेक जोड़े

निमेष-हीन और गम्भीर काले नेत्रोंकी ओर देखता हुआ पत्थरकी भाँति निश्चल खड़ा रहा।

यह समाचार पाकर कोअी दो घण्टेके अन्दर ही दूसरे गाँवसे चमारोंका अेक दल वहाँ आकर अेकत्र हो गया और वे लोग महेशको बाँसमें बाँधकर वहाँसे अुठा ले गये। अुनके हाथोंमें धारदार चमचमाते हूअे छुरे देखकर गफूर सिहर अुठा और अुसने आँखें मूँद लीं; लेकिन मुँहसे अुसने अेक बात भी नहीं कही।

गाँवके लोगोंने कहा कि तर्करत्नसे व्यवस्था माँगनेके लिये जमींदारने अपना आदमी भेजा है। कहीं अैसा न हो कि प्रायश्चित्तका खर्च जुटानेके लिये तुम्हें अपना घर-बार तक बेचना पड़े।

लेकिन गफूरने अिन सब बातोंका कोअी अुत्तर नहीं दिया। वह अपने दोनों घुटनोंके अुपर सिर रखकर जहाँ-का-तहाँ बैठा रहा।

बहुत रात बीत जानेपर गफूरने अपनी लड़की अमीना को जगाकर कहा—"अमीना, चलो, हमलोग चलें।"

वह दरवाजेके पास सोयी हुयी थी। आँखें मलती हुअी वह अुठकर बैठ गयी और बोली—"कहाँ चलोगे, अब्बा?"

गफूरने कहा—"फूलबेड़ाके जूटके कारखानेमें काम करनेके लिये।"

लड़की चकित होकर देखती रह गयी। अिससे पहले बहुत कुछ दुःख पड़नेपर भी अुसका पिता कभी कारखानेमें

काम करनेके लिये तैयार नहीं होता था। वह कहा करता था कि वहाँ धर्म अीमान कुछ भी नहीं रह जाता, औरतोंकी अिज्ज़त-आबरू नहीं रह जाती। अुसके मुँहसे अिसी तरहकी बातें वह कअी बार सुन चुकी थी।

गफूरने कहा--"जल्दी चलो बेटी, देर मत करो। अभी बहुत दूर जाना है।"

अमीना पानी पीनेका बधना और पिताके भात खानेकी पीतलकी थाली साथ ले चलना चाहती थी; लेकिन गफूरने अुसे मना किया और कहा—"बेटी, ये सब चीजें यहीं रहने दो। अिनसे हमारे महेशका प्रायश्चित्त होगा।"

अन्धकारपूर्ण गम्भीर निशामें अपनी लड़कीका हाथ पकड़कर गफूर घरसे बाहर निकला। अिस गाँवमें अुसका कोअी आत्मीय नहीं रहता था, अिसलिये अुसे किसीसे कुछ कहने-सुननेकी भी कोअी जरूरत नहीं थी। आँगनसे निकलकर और बाहर रास्तेके पास अुसी बबूलके पेड़के नीचे पहुंचकर वह रुक गया और जोर जोरसे रोने लगा। नक्षत्र-खचित कृष्ण आकाशकी ओर सिर अुठाकर अुसने कहा—"या अल्लाह! मुझे तू जो चाहे सज़ा देना; लेकिन मेरा महेश प्यासा ही मर गया है। अुसके चरनेके लिये किसीने ज़रा-सी भी जमीन नहीं छोड़ी थी। जिसने तुम्हारी दी हुअी मैदानकी घास अुसे नहीं ख़ाने दी और तुम्हारा दिया हुआ पानी तक अुसे नहीं पीने दिया, अुसका कसूर तुम कभी माफ़ न करना।

काकी

अुस दिन बड़े सबेरे जब श्यामूकी नींद खुली तब अुसने देखा, घर-भरमें कुहराम मचा हुआ है। अुसकी काकी –अुमा–अेक कम्बलपर नीचेसे अूपर तक कपड़ा ओढे हुअे भूमि-शयन कर रही है और घरके सब लोग अुसे घेरकर बड़े करुण-स्वरमें विलाप कर रहे हैं।

लोग जब अुमाको श्मशान ले जानेके लिये अुठाने लगे तब श्यामूने बड़ा अुपद्रव मचाया। लोगोंके हाथोंसे छूटकर वह अुमाके अूपर जा गिरा और बोला—"काकी तो सो रही हैं। अुन्हें अिस तरह अुठाकर कहाँ लिये जा रहे हो? मैं न ले जाने दूँगा।"

लोगोंने बड़ी कठिनतासे अुसे हटा पाया। काकीके अग्निसंस्कारमें भी वह न जा सका। अेक दासी राम राम करके अुसे घरपर ही सँभाले रही।

यद्यपि बुद्धिमान गुरुजनोंने अुसे विश्वास दिलाया कि अुसकी काकी अुसके मामाके यहाँ गयी है, परन्तु असत्यके आवरणमें सत्य बहुत समय तक छिपा न रह सका। आसपासके अन्य अबोध बालकोंके मुँहसे ही वह प्रकट हो गया। यह बात अुससे छिपी न रह सकी कि काकी और कहीं नही, अूपर रामके यहाँ गयी है। काकीके

लिये कअी दिन तक लगातार रोते रोते अुसका रुदन तो क्रमशः शान्त हो गया, परन्तु शोक शान्त न हो सका। जिस तरह वर्षाके अनन्तर अेक ही दो दिनमें पृथ्वीके अूपरका पानी अगोचर हो जाता है, परन्तु बहुत भीतर तक अुसकी आर्द्रता बहुत दिन तक बनी रहती है, अुसी प्रकार वह शोक अुसके अन्तस्तलमें जाकर बस गया। वह प्रायः अकेला बैठा बैठा शून्य मनसे आकाशकी ओर ताका करता।

अेक दिन अुसने अूपर अेक पतंग अुड़ती देखी। न जानें क्या सोचकर अुसका हृदय अेकदम खिल अुठा। विश्वेश्वरके पास जाकर बोला—"काका, मुझे अेक पतंग मँगा दो। अभी मँगा दो।"

पत्नीकी मृत्युके बादसे विश्वेश्वर बहुत अन्यमनस्क-से रहते थे। 'अच्छा मँगा दूँगा' कहकर वे अुदास भावसे बाहर चले गये।

श्यामू पतंगके लिये बहुत अुत्कंठित हो अुठा। वह अपनी अिच्छा किसी तरह न रोक सका। अेक जगह खूँटीपर विश्वेश्वरका कोट टँगा हुआ था। अिधर-अुधर देखकर अुसने अुसके पास अेक स्टूल सरकाकर रक्खा। और अूपर चढ़कर कोटकी जेबें टटोलीं। अुनमेंसे अेक चवन्नीका आविष्कार करके वह तुरन्त वहाँसे भाग गया।

सुखिया दासीका लड़का—भोला—श्यामूका समवयस्क साथी था। श्यामूने अुसे चवन्नी देकर कहा—"अपनी

जीजीसे कहकर गुपचुप अेक पतंग और डोर मँगा दो। देखो, खूब अकेलेमें लाना; कोअी जान न पाये।"

पतंग आयी। अेक अँधेरे घरमें अुसमें डोर बाँधी जाने लगी। श्यामूने धीरेसे कहा—"भोला, किसीसे न कहो तो अेक बात कहूँ?"

भोलाने सिर हलाकर कहा—"नहीं, किसीसे न कहूँगा।" श्यामूने रहस्य खोला। कहा—"मैं यह पतंग अूपर रामके यहाँ भेजूँगा। अिसे पकड़कर काकी नीचे अुतरेंगी। मैं लिखना नहीं जानता, नहीं तो अिसपर अुनका नाम लिख देता"

भोला श्यामूसे अधिक समझदार था। अुसने कहा—"बात तो बड़ी अच्छी सोची, परन्तु अेक कठिनता है। यह डोर पतली है। अिसे पकड़कर काकी अुतर नहीं सकतीं। अिसके टूट जानेका डर है। पतंगमें मोटी रस्सी हो तो सब ठीक हो जाय।"

श्यामू गंभीर हो गया। मतलब यह—बात लाख रुपयेकी सुझायी गयी है। परन्तु अेक कठिनता यह थी कि मोटी रस्सी कैसे मँगायी जाय? पासमें दाम हैं नहीं और घरके जो आदमी अुसकी काकीको बिना दया मायाके जला आये हैं, वे अुसे अिस कामके लिये कुछ देंगे नहीं। अुस दिन श्यामूको चिन्ताके मारे बड़ी रात तक नींद नहीं आयी।

पहले दिनकी ही तरकीबसे दूसरे दिन फिर अुसने विश्वेश्वरके कोटसे अेक रुपया निकाला। ले जाकर भोलाको दिया और बोला—"देख भोला, किसीको मालूम न होने

पाये। अच्छी अच्छी दो रस्सियाँ मँगा दे। अेक रस्सी ओछी पड़ेगी। जवाहिर भैयासे मैं अेक कागज़पर 'काकी' लिखवा रक्खूँगा। नामकी चिट रहेगी तो पतंग ठीक अुन्हींके पास पहुँच जायगी।"

दो घंटे बाद प्रफुल्ल मनसे श्यामू और भोला अँधेरी कोठरीमें बैठे बैठे पतंगमें रस्सी बाँध रहे थे। अकस्मात् शुभ कार्यमें विघ्नकी तरह अुग्र मूर्ति धारण किये हुअे विश्वेश्वर वहाँ आ घुसे। भोला और श्यामू को धमकाकर बोले—"तुमने हमारे कोटसे रुपया निकला है?"

भोला सकपकाकर अेक ही डाँटमें मुख़बिर बन गया। बोला—"श्यामू भैयाने रस्सी और पतंग मँगानेके लिये निकाला था।"

विश्वेश्वरने श्यामूको दो तमाचे जड़कर कहा—"चोरी सीखकर जेल जायगा! अच्छा, तुझे आज अच्छी तरह समझता हूँ।" कहकर दो-चार थप्पड़ और जड़कर पतंग फाड़ डाली। अब रस्सियोंकी ओर देखकर अुन्होंने पूछा—"ये किसने मँगायीं?"

भोलाने कहा—"अिन्होंने मँगायी थीं। कहते थे, अिससे पतंग तानकर काकीको रामके यहाँसे नीचे अुतारेंगे।"

विश्वेश्वर अेक क्षणके लिये हतबुद्धि होकर खड़े रह गये। अुन्होंने फटी हुअी पतंग अुठाकर देखी। अुसपर अेक कागज़ चिपका था, जिसपर लिखा हुआ था—'काकी'।

पनघट

अुस कुअेंके अूपर अींट–चूनेका बना हुआ बाँध नँ था। चार पत्थर बैठा दिये, जिससे अुसका बन्धान गोल और ठीकसे बनाया जान पड़ता था। चारों ओर कीच-कादों बेहद, और असीमें रखे हुअे पत्थरपरसे ही जान पड़ता था, अुस ओर पनघटपर—!

बहुत-सी स्त्रियाँ पानी भर रही थीं। बिना रहँट-चकेका कुआँ था वह। पानी खींचना भी हुआ तो सिर्फ नीचे झुककर ही खींचा जा सकता था।

हरअेककी साड़ीका रंग था अलग अलग। पीला, कुसुंभी, सफ़ेद छींटोंका काला, कितने ही रंग थे। पानी खींचते वक्त वे नीचे झुकतीं तो अुस सँकरे कुअेंका मुँह ढँक-सा जाता। दूरसे देखनेवालेको लगता, मानो रंग रंगके फूल-फलोंसे झुकी हुअी बेलोंकी झुरमुट ही हो!

मिट्टीकी गगरियाँ डोरीसे अन्दर छोड़तीं और पानी भरतीं। बन्धानके पत्थरसे छूकर कब वह गगरी फूट जायगी, अिसका कुछ ठिकाना नहीं था। वे बहुत सम्हाल-सम्हालकर पानी भर रही थीं। गगरी भरकर ठीकसे अूपर आ जाती, तभी वे अिस-अुस ओर देखतीं।

"यशोदा, आज हाथकी सब चूडियाँ कहाँ गयीं? आज सबेरे तक तो थीं सब-की-सब?" अेकने डर डरकर सवाल पूछा। यशोदाका मुँह सूख गया था, आँखें सूजकर लाल हो गयी थीं और वह हमेशासे कम बोल रही थी।

अुसके पास खड़ी गिरिजाने भी अपने माथेपरकी लटें अुँगलियोंसे सम्हालीं और स्निग्ध दृष्टिसे अुसकी ओर देखकर वही सवाल पूछा। अुसे जबाब देना ही पड़ा। अुसके ललाटपर थोड़ी शिकन पड़ गयी। होंठ ज़रा भीच-कर वह बोली—"तेरे ही भैयाने बढ़ा दीं चूड़ियाँ री!"

"किसने? राजारामने?"

"और तेरे आदमीने कुछ नहीं कहा?" दूसरीने अचरजसे पूछा।

वे साफ़ बोला करती थीं। अंदर और बाहर अैसी भिन्न आदतें अुनमें नहीं थीं।

"वे भी आखिर क्या बोलें? बार बार अुलटे मुझे ही सुननी पड़ी जली-कटी बातें। खाना खाने बैठे और रायतेका नाम सुना सो जल्दी जल्दी लगी मैं पोदीना पीसने। अितनेमें तेरे भैयाने पानी या कुछ माँगा। जल्दीमें मैंने सुना नहीं होगा कि चढ़ गये अुनके तेवर और थाली छोड़कर अुठे और कटोरी अितने ज़ोरसे मारी कि सीधी मेरी कलाअीपर आ लगी।"

"अेक अेक नया; सुनो सो अुलटा ही सब! और तेरे घरमें ये सब सह लेते है?"

यशोदाकी आँखें छलछला आयी थीं।

"वह भी क्या करेगा बेचारा!" गंगाने गगरीमें रस्सीका फंदा डालते हुअे कहा। चार जनोंके घरमें बोलना भी तो पाप है। हाँ, चाहे अुसके मनमें लाख हो, वह बोलेगा तो यशोदासे ही। सब चुपचाप पी लेना पड़ता है। बेचारीको—"

सब औरतें तटस्थ बनकर सहानुभूतिसे यशोदाकी ओर देख रही थीं। वह अंचलसे आँखें पोंछते हुअे बोली—"अब कुछ याद नहीं करूँगी।"—अैसी कोशिश करनेपर भी अुसे सारा अतीत याद आ गया। वह फूट पड़ी।

"चुप, चुप बेटा!" अभी अभी आयी प्रौढ़ाने अुसकी पीठपर हाथ फेरा। दो मीठे वचन सुनकर यशोदाकी हिचकीका तार बँध गया।

"धीरज रखो बेटा, अैसा ही है चार जनोंका घर!"

"नहीं तो क्या री!" यशोदा अेकदम बोलने लगी। अुसकी हिम्मत अुसकी आँखोंमेंसे फूटी पड़ती थी।

"चुप्पी, सो भी कहाँ तक रखूँ? प्राण तिल तिलकर जलते रहते हैं। सास बोले सो अलग, देवरोंके मिज़ाज तो सातवें आसमानपर। अूपरसे वे तो बोलते ही हैं। वे सब कुछ जानकर भी अनजान बनते हैं। मैं ही अकेली सबके लिये मरूँ? जान नोंचे डालते हैं हर घड़ी। अेकाध दिन कुअेंमें—"

" छिः अैसा अशुभ नहीं बोलना चाहिये। चल पानी खींच। देख, वह गगरी पत्थरसे टकरा रही है—"

" अेक दिनका जुल्म हो तो—"

वह गगरी अुसने तौलकर खींच ली और वैसे ही भारी हाथोंसे अूपर ले ली। वाकी स्त्रियाँ भारी दिलसे पानी निकाल रही थीं। कोअी किसीसे बोलती नहीं थी।

दूरसे देखनेवालोंको लगता—मानो फल-फूलोंसे झुकी हुअी रंग रंगकी बेलोंकी झुरमुट है! अेक....

पर पास जानेपर पता लगता—अुसकी आड़में छिपा हुआ, बिना बन्दवाला, किसीके भी प्राण लेनेपर तुला, काले पत्थरोंका अँधेरा कुआँ है।

और....

फिर भी बेचारियाँ अुसमें गगरियाँ डालकर सम्हाल-सम्हालकर जीवन खींच रही हैं।

देशभक्त

"स्वामिन्, आज कोअी सुंदर सृष्टि करो। किसी अैसे प्राणीका निर्माण करो जिसकी रचनापर हमें गौरव हो सके। क्यों?"

"सचमुच प्रिये, आज तुम्हें क्या सूझा जो सारा धंधा छोड़कर यहाँ आयी हो, और मेरी सृष्टि-परीक्षा लेनेको तैयार हो?"

"तुम्हारी परीक्षा, और मैं लूँगी? हरे, हरे। मुझे व्यर्थ ही काँटोंमें क्यों घसीट रहे हो नाथ? योंही बैठी बैठी तुम्हारी अद्‌भुत रचना 'मृत्युलोक' का तमाशा देख रही थी। जब जी अूब गया तब तुम्हारे पास चली आयी हूँ। अब संसारमें मौलिकता नहीं दिखाअी पड़ती। वही पुरानी गाथा चारों ओर दिखायी-सुनायी पड़ रही है। कोअी रोता है, कोअी खिलखिलाता है; अेक प्यार करता है दूसरा अत्याचार करता है; राजा धीरे धीरे भीख माँगने लगता है और भिक्षुक शासन करने। अिन बातोंमें मौलिकता कहाँ? अिसलिये प्रार्थना करती हूँ, कोअी मनोरंजक सृष्टि सँवारो। संसारके अधिकतर प्राणी तुमको शाप ही देते हैं, अेक बार आशीर्वाद भी लो।"

"अच्छी बात है; अिस समय चित्त भी प्रसन्न है। किसीसे मानव-सृष्टिकी आवश्यक सामग्रियाँ यहीं मँगवाओ। आज मैं तुम्हारे सामने ही तुम्हारी सहायतासे सृष्टि करूँगा।"

"मैं, और तुमको सहायता दूँगी? तब रहने दो, हो चुकी सृष्टि! सृष्टि करनेकी योग्यता यदि मुझमें होती तो तुमको कष्ट देनेके लिये यहाँ आती?"

"नाराज़ क्यों होती हो? तुमसे पुतला तैयार करनेको कौन कहता है? तुम यहाँ चुपचाप बैठी रहो। हाँ, कभी कभी मेरी और मेरी कृतिकी ओर अपने मधुर कटाक्षको फेर दिया करना। तुम्हारी अितनी ही सहायतासे मेरी सृष्टिमें जान आ जायगी, समझी?"

२

क्षिति, जल, अग्नि, आकाश और पवनके संमिश्रणसे विधाताने अेक पुतला तैयार किया। अिसके बाद अुन्होंने सबसे पहले तेजको बुलाकर अुस पुतलेमें प्रवेश करनेको कहा। तेजके बाद सौंदर्य, दया, करुणा, प्रेम, विद्या, बुद्धि बल, संतोष, साहस, अुत्साह, धैर्य, गंभीरता आदि समस्त सद्गुणोंसे अुस पुतलेको सजा दिया। अंतमें आयु और भाग्यकी रेखाअें बनानेके लिये ज्योंही विधाताने लेखनी अुठायी, त्योंही ब्रह्माणीने रोका—"सुनिये भी, अिसके भाग्यमें क्या लिखने जा रहे है, और आयु कितनी दीजियेगा?"

"क्यों? तुमसे अिन बातोंसे मतलब? तुम्हें तो तमाशा भर देखना है, वह देख लेना। भौहें तनने लगीं न? अच्छा

लो, सुन लो। असके भाग्यमें लिखी जा रही है, भयंकर दरिद्रता, दुःख, चिन्ता और असकी आयु होगी वीस वर्षोंकी।"

"अरे, यह तमाशा कर रहे हैं? बल, साहस, दया, तेज, सौंदर्य, विद्या, बुद्धि आदि गुणोंके देनेके बाद दरिद्रता, दुःख, चिन्ता आदिके देनेकी क्या आवश्यकता? अिस सृष्टिको देखकर लोग आपकी प्रशंसा करेंगे या गालियाँ देंगे? फिर, केवल बीस वर्षोंकी अवस्था! अिन्हीं कारणोंसे मृत्यु-लोकके कवि आपकी शिकायत करते हैं। क्या फिर किसीसे 'नाम चतुरानन पै चूकते चले गये' लिखवानेका विचार है?"

विधाताने मुस्कराकर कहा—"अब तो रचना हो गयी। चुपचाप तमाशा भर देखो। असकी आयु अिसीलिये कम रखी है, जिसमें हमें तमाशा जल्द दिखायी पड़े।"

ब्रह्माणीने पूछा—"असे मृत्यलोकवाले किस नामसे पुकारेंगे?"

प्रजापतिने गर्व-भरे स्वरमें अुत्तर दिया—"देशभक्त!"

अमरावतीसे अिंद्रने, कैलाशसे शिवने और वैकुंठसे कमलापतिने, संसार-रंगमंचपर देशभक्तका प्रवेश अुस समय देखा, जब अुसकी अवस्था अुन्नीस वर्षकी हो गयी। अिसमें कोअी आश्चर्यकी बात नहीं। देव-मंडलीका अेक अेक दिन हमारी शताब्दीसे भी बड़ा होता है। हमारे अुन्नीस वर्ष तो अुनके कुछ मिनटोंसे भी कम थे।

देशभक्तके दर्शनोंसे भगवान कामारि प्रसन्न होकर नाचने लगे। अून्होंने अपनी प्राणेश्वरी पार्वतीका ध्यान

देशभक्तकी ओर आकर्षित करते हुअे कहा—"देखो, यह सृष्टिकी अभूतपूर्व रचना है। कोअी भी देवता देशभक्तके रूपमें नरलोकमें जाकर अपनेको धन्य समझ सकता है। प्रिये, अिसे आशीर्वाद दो।"

प्रसन्नवदना अुमाने कहा—"देशभक्तकी जय हो!"

अेक दिन देशभक्तके तेजपूर्ण मुख-मंडलपर अचानक कमलाकी दृष्टि पड़ गयी। अुस समय वह (देशभक्त) हाथमें पिस्तौल लिये किसी देशद्रोहीका पीछा कर रहा था। अिंदिराने घबराकर विष्णुको अुसकी ओर आकर्षित करते हुअे कहा—"यह कौन हैं? मुखपर अितना तेज, अैसी पवित्रता और करने जा रहे है, राक्षसी कर्म हत्या? यह कैसी लीला है, लीलाधर!"

विष्णुने कहा—"चुपचाप देखो,

परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्।
धर्मसंस्थापनार्थाय संभवामि युगे युगे॥

यदि यह देशभक्त राक्षसी काम करने जा रहा है, तो राम, कृष्ण, प्रताप, शिव, गोविन्द, नेपोलियन, सबने राक्षसी काम किया है। देवी, अिन्हें प्रणाम करो। यह कर्ताकी पवित्र कृति है।"

ॐ ॐ ॐ

हाथकी पिस्तौल देशद्रोहीके मस्तकके सामने धरकर कहा—"मूर्ख, पश्चात्ताप कर, देशद्रोहसे हाथ खींचकर मातृसेवाकी प्रतिज्ञा कर; नहीं तो मरनेके लिये तैयार हो जा।"

देशद्रोहीके मुखपर घृणा और अभिमानकी मुस्कराहट दौड़ गयी। अुसने शासनके स्वरमें अुत्तर दिया—"अज्ञान, सावधान! हम शासकोंके लाड़ले हैं, हमारे माँ-बाप और अीश्वर सर्व-शक्तिमान सम्राट हैं। सम्राटके संमुख देशकी बड़ाअी?"

"अन्तिम बार पुनः कह रहा हूं, माताकी जय बोल; अन्यथा अिधर देख।"

देशभक्तकी पिस्तौल गरजनेके लिये तैयार हो गयी।

सिरपर संकट देखकर देशद्रोहीने अपनी जेबसे सीटी निकालकर जोरसे बजायी। देशद्रोहीके अनेक रक्षक गुप्त रूपसे अुसके आसपास मौजूद थे। देखते देखते बीस देशद्रोहियोंका दल देशभक्तकी ओर लपका। फिर क्या था, देशभक्तकी पिस्तौल गरज अुठी। क्षण-भरमें देशद्रोहियोंका सरदार, कबूतरकी तरह पृथ्वीपर लोटने लगा। गिरफ्तार होनेके पूर्व सफल-प्रयत्न देशभक्त आनंदित होकर चिल्ला अुठा—"माताकी जय हो!"

काँपते हुअे अिन्द्रासनने, पुष्पवृष्टि करते हुअे नंदन कानननने, तांडव नृत्यमें लीन रुद्रने, कलकल करती हुअी सुर-सरिताने अेक स्वरसे कहा—"देशभक्तकी जय हो!"

विधाता प्रेम-गद्‌गद होकर ब्रह्माणीसे बोले—"देखती हो, देशभक्तके चरण-स्पर्शसे अभागा कारागार अपनेको स्वर्ग समझ रहा है। लोहेकी हथकड़ी-बेड़ियोंने मानो पारस पा लिया है, संसारके हृदयमें प्रसन्नताका समुद्र अुमड़ रहा

है, वसुंधरा फूली नहीं समाती। यह है मेरी कृति, यह है मेरी विभूति ! प्रिये, गाओ; मंगल मनाओ। आज मेरी लेखनी धन्य हुअी !"

३

जिस दिन देशभक्तकी जीवनीका अंतिम पृष्ठ लिखा जानेवाला था अुस दिन स्वर्गलोकमें आनंदका अपार पारावार अुमड़ रहा था। त्रिंशत् कोटि देवांगनाओंकी थालियोंको अुदार कल्पवृक्षने अपने पुष्पोंसे भर दिया, अमरावतीने अपूर्व शृंगार किया था, चारों ओर मंगल-गान गाये जा रहे थे।

समयसे बहुत पहले ही देवतागण विमानपर आरूढ होकर आकाशमें विचरने और देशभक्तके आगमनकी प्रतीक्षा करने लगे।

सम्राटके समर्थक भीषण शस्त्रास्त्रोंसे सुसज्जित होकर अेक बड़े मैदानमें खड़े थे। देशभक्तपर सम्राटके प्रति विद्रोहका अपराध लगाकर न्यायका नाटक खेला जा चुका था। न्यायाधीशकी यह आज्ञा सुनायी जा चुकी थी कि "या तो देशभक्त अपने कर्मोंके लिये पश्चात्ताप प्रकट कर 'सम्राटकी जय' घोषणा करे या तोपसे अुड़ा दिया जाय !" देशभक्त पश्चात्ताप क्यों करने लगा ? अतः अुसे सम्राटके सैनिकोंने जंजीरमें कसकर तोपके संमुख खड़ा कर दिया।

सम्राटके प्रतिनिधिने कहा—"अपराधी, न्यायकी रक्षाके लिये अंतिम बार फिर कहता हूँ, 'सम्राटकी जय' घोषणा कर पश्चात्ताप कर ले।"

मुस्कराते हुअे देशभक्त बंदीने कहा—" तुम अपना काम करो, मुझसे पश्चात्तापकी आशा व्यर्थ है। तुम मुझसे 'सम्राटकी जय' कहलानेके लिये क्यों मरे जा रहे हो? सच्चा सम्राट कहाँ है? तुम्हारे कहनेसे संसारके लुटेरेको मैं कैसे सम्राट मान लूँ? सम्राट न्यायका गला घोंट सकता है? सम्राट रक्तका प्यासा हो सकता है? भाअी, तुम जिसे सम्राट कहते हो, अुसे मनुष्य और मनुष्यताके अुपासक राक्षस कहते हैं। फिर सम्राटकी जय-घोषणा कैसी? तुम मुझे तोपसे अुड़ा दो। अिसीमें सम्राटका मंगल है, अिसीसे अुसके पापोंका घड़ा फूटेगा और अुसे मुक्ति मिलेगी।"

देवमंडलके बीचमें बैठी हुअी माता मनुष्यताकी गोदमें बैठकर देशभक्तने और साथ ही त्रिंशत् कोटि देवताओंने देखा—पंचतत्वके अेक पुतलेके अत्याचारके अुपासकोंने तोपसे अुड़ा दिया।

अुस पुतलेके अेक अेक कणको देवताओंने मणिकी तरह लूट लिया। बहुत देर तक देवलोक 'देशभक्तकी जय!' से मुखरित रहा।

कठिन शब्दार्थ

बिसाती : पृष्ठ १–५

बिसाती–चूड़ी, सुई, धागा आदि सामान बेचनेवाला
सौरभ–सुगंध
तलहटी–पहाड़ोंके नीचेकी ज़मीन
स्निग्ध–भीगा हुआ, चिकना
दाड़िम–अनार
समीरण–वायु
झुरमुट–पेड़-पौधोंका समूह, कुंज
अवगुंठन–परदा, घूँघट
निस्पंद–गतिहीन, निर्जीव-से
अलकें–लटकते बाल, ज़ुल्फें, लटें
गुंजान–घनी, बहुत
अभिभूत–पराजित, वशीभूत
आगा–साहब, प्रतिष्ठित
काफ़िला–यात्रियोंका समूह
क्रंदन–रोना
प्रेयसी–प्रियतमा
कानन–वन
पालतू–पाला हुआ
कोहकाफ़–सुंदर लोगों व परियोंके रहनेका कल्पित पहाड़

प्रायश्चित्त : पृष्ठ ६–१४

कबरी–सफेद रंगपर काले-पीले दागवाली
मायका–स्त्रियोंके माता-पिताका घर
करधनी–कमरका आभूषण
छक्के-पंजे–चालबाज़ी
ऊँघना–नींद लगना
जिन्स–सामान
नदारद–ग़ायब, नष्ट
पर पकड़ना–आदत लगना
दुश्वार–मुश्किल
बालाई–मलाई
कठहरा–पिंजड़ा
सरगर्मी–तेज़ी
फ़ासिला–अंतर
हौसला–उत्कंठा, लालसा
ताक–आला
चम्पत–चलता, ग़ायब
ताँता बँधना–सिलसिला जारी होना
रुँआसी–रोयी-जैसी, रोनी

अखरेगा—खटकेगा
महरी—घरकी दासी
फ़र्श—ज़मीन

कविका त्याग : पृष्ठ १९–३४

कुम्हलाया—मुरझाया
रौनक—चमक-दमक
थाह—अन्दाज
ओछापन—छुटाओ, क्षुद्रता
कारबंकल—फोड़ेकी बीमारीका नाम
रेतकी दीवार खड़ी करना—असंभवको संभव सोचना
कलेजेपर अंगारे रखना—बहुत दुखी होना
आकाश सिरपर अुठाना—दुःखसे जोर जोरसे चिल्लाना
वहम—शक, झूठा, संदेह
जोंक—रक्त चूसनेवाला कीड़ा
गहन—गहरा
विशद—विस्तृत
करतूत—करनी
किरकिरा—बेमज़ा
निकृष्टतर—नीच
चीत्कार—करुण पुकार
कलेजा मुँहको आना—बहुत दुःख होना

शत्रु : पृष्ठ ३५–३९

पुंगी—बर्मी बौद्ध भिक्षुक
चर—जासूस, अनुचर

देवसेना : पृष्ठ ४०–५५

बीच—समुद्रका किनारा
शक्ल—सूरत
करघा—कपड़े बुननेका औजार
मेख़—खूँटी, कील
तनख्वाह—वेतन
धूर्त—चालाक, बदमाश
हक़ीक़त—तथ्य, असलियत
तलाशी—जाँच
अुद्वेग—आवेश
सुलह—समझौता
बँटवारा—बाँटना
बंधक—गिरवी
यार—दोस्त
मदों—विभागों, खातों
सब्र—धैर्य
मेठ—मजदूरोंका सरदार
जुरमाना—दण्ड
प्रतिवाद—विरोध, खंडन
थामकर—रोककर
किंकर्तव्यविमूढ—कर्तव्य-बुद्धिसे

ठौर–जगह

जच्चा–प्रसूता स्त्री

शहज़ोर–बलवान

हलकोरा–लहर

ठाकुरका कुआँ : पृष्ठ ५६–६१

सिरा–छोर, किनारा

मैदानी बहादुरी–खुल्लमखुल्ला युद्धमें वीरता

नाजिर–अदलतका बड़ा मुंशी

मोहतमिम–व्यवस्थापक

बेपैसे-कौड़ी–मुफ्त

धुँधली–अस्पष्ट, कुछ कुछ अंधेरी

जगत–कुअेंके चारों ओरका चबूतरा

रिवाजी पाबंदी–प्रचलित प्रथाका बंधन

मज़बूरी–लाचारी, विवशता

गलेमें तागा डाल लेते हैं–अूँची जातिके द्विज हैं

छटा–शोभा, दीप्ति

जाल-फरेब–धोखा

नानी मरना–परेशान होना

साँप लोटना–अीर्ष्यासे बहुत दुखी होना

गज़ब–अपूर्व, विलक्षण

साया–छाया

बेगार–मुफ्तमें लिया गया काम

दबे पाँव–आहिस्तेसे, चुपकेसे

सूराख़–छेद

ताअी : पृष्ठ ६२–७९

ताअू–पिताके बड़े भाई

ताअी–ताअूकी पत्नी

चुहलबाज़ी–खुशी मनानेका भाव

मटकाकर–मोड़कर, चमककर

आढ़त–दूसरेके मालकी बिक्रीका काम

अपना ही ओटना–अपनी ही बात कहते जाना

पोच–तुच्छ

चोली-दामनका-सा–हिला-मिला

नितांत–बिल्कुल

झेंपना–शरमाना

मूँजी–कंजूस

आशुकवि–शीघ्र कवि

निर्दिष्ट–बताया हुआ, निश्चित

ओसारा–दालान, बरामदा

फुर्ती–तेजी

हिंडोला–झूला

बावजूद–तिसपर भी

चचेरे भाअी : पृष्ठ ८०–९२

बादशाहत–साम्राज्य

साख–प्रतिष्ठा, विश्वास
निहायत–बिल्कुल
नाज–धान्य
छक्के छुड़ाना–परेशान कर देना
आलीशान–शाही
रुक्का–आर्डर-चिट्ठी
चौकन्ने–होशियार, सावधान
अलगौझा–बँटवारा
पुश्त–पीढ़ी
बुलंद–जोरकी
शेखी-खोर–झूठी शान झाड़नेवाला
जिमाना–खाना खिलाना
बुद्धू–गँवार
मक्कार–चालाक
खातिर-तवाज़ा–आव-भगत, सम्मान

महेश : पृष्ठ ९३-११७

बरसगाँठ–जन्मदिन
दिगंत–क्षितिज
दरार–फटी जगह
सर्पिल–सर्पके समान
सिवान–सीमान्त, हद
सटा हुआ–लगा हुआ, मिला
पगहा–पशुको बाँधनेकी रस्सी
दँवरी–खलिहानमें बैलोंसे कुचलवाकर, अनाज तयार करना
पुआल–धान आदिके सूखे डंठल
खलिहान–फसल काटकर रखनेका स्थान
आँटी–लम्बी घासका गट्ठा
खत्ती–अनाज रखनेका गड्ढा
हट्टा–बाज़ार
विवर्ण–रंग-रहित
खर–घास
सहनकी–मट्टीका बरतन
कांजीहौस–जानवर बंद रखनेकी सरकारी जगह, घेरा
रेहन–गिरवी
चाँप–दबाव
श्रान्त–थका हुआ
मुबारक–शुभ, अच्छा
निगोड़े–अभागा
बल्लियों अुछलना–खुशीसे कूदना-फाँदना
गिरगिट–रंग बदलनेवाला जानवर, छिपकिली
भृकुटी–भौंहें
तिक्त–कड़ुआ
गुस्ताखी–शरारत, दुस्साहस
प्यादा–सिपाही

विस्मृत–भूला हुआ
आर्त–दुःखी
निर्निमेष–बिना पलक गिराये, टकटकी
खचित–भरा हुआ, जड़ा हुआ
महक–गंध

काकी : पृष्ठ ११८-१२१

कुहराम–विलाप, रोना-पीटना
आर्द्रता–गीलापन
सकपकाकर–घबराकर
मुखबिर–जासूस

पनघट : पृष्ठ १२२-१२५

कीच-कादों–कीचड़
रहँट-चक्का–पानी खींचनेके लिये बना हुआ यंत्र
सँकरे–छोटे
झुरमुट–पेड़-पौधोंका समूह
सकारे–सबेरे
ललाट–सिरके आगेका हिस्सा
शिकन–बल
बढ़ा दी–तोड़ दी
तेवर चढ़ना–गुस्सा होना
नियाव–न्याय
खूसट–मनहूस, मूर्ख
हिचकी–रोनेकी हुदकी